(८)

२/५ २-११-६८

युक्रांद

मैं कहता हूं ! 'मिटो ताकि हो सको ।'
बीज मिटता है तब वृक्ष बनता है ।
बूंद मिटती है तो सागर हो जाती है ।
और मनुष्य है कि मिटना ही नहीं चाहता है ?
फिर परमात्मा प्रगट कैसे हो ?
मनुष्य बीज है, परमात्मा वृक्ष है ।
मनुष्य बूंद है, परमात्मा सागर है ।

युक्रांद

आचार्य श्री रजनीश जी की
सृजनात्मक जीवन दृष्टि का
पाक्षिक संकलन-पत्र

मानसेवी सम्पादक
अजित कुमार

सह-सम्पादक
लोककुमार पांडे

वर्ष १ : अंक ६
१ नवम्बर १९६९

मूल्य
६० न० पै० एक प्रति
वार्षिक १२ रु०

मुख एवं अंतिम पृष्ठ लेआउट
शशिन् यादव

मुखपृष्ठ डिजाइन
कुमारी गीता

दो शब्द

युग चेतना गतिमान हो, मृत मूल्यों के स्थान पर जीवन्त मूल्य और जीवन्त सत्ता का आविर्भाव हो—यही है इस अंक के माध्यम से हमारा प्रयास।

इस दिशा में आचार्य श्री की प्रेरक, ज्वलंत जीवन दृष्टि आप तक पहुंचा रहे हैं।

—युक्रांद परिवार

महत्वपूर्ण सूचना

२३ नवम्बर को रात्रि ७-४० पर आचार्य श्री की भोपाल (197.4 M), इन्दौर (461.5 M), रायपुर (306.1 M.), ग्वालियर (215.8M.) एवं जबलपुर (254.2 M.) रेडियो स्टेशनों से हिन्दी वार्त्ता "गुरू नानक : धार्मिक समन्वय के प्रतीक" प्रसारित होगी।

**प्रभु अपने अमृत द्वार उन्हीं के लिए खोलता है,
जो स्वयं प्रभु के होते हैं।**

●

मनुष्य का जन्म दासता में है। हम अपने ही दास पैदा होते हैं। वासना की जंजीरों के साथ ही जगत में हमारा आना होता है। बहुत सूक्ष्म बन्धन हमें बांधे हैं। परतन्त्रता जन्मजात है। वह प्रकृति प्रदत्त है। हमें उसे कमाना नहीं होता। मनुष्य पाता है कि वह परतंत्र है।

पर, स्वतंत्रता अर्जित करनी होती है उसे वही उपलब्ध होता है, जो उसके लिए श्रम और संघर्ष करता है। स्वतंत्रता के लिए मूल्य देना होता है।

जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, वह निर्मूल्य नहीं मिलता।

प्रकृति से मिली परतन्त्रता दुर्भाग्य नहीं है। दुर्भाग्य है, स्वतंत्रता को अर्जित न कर पाना। दास पैदा होना बुरा नहीं, पर दास ही मर जाना अवश्य बुरा है। अन्तस् की स्वतंत्रता को पाए बिना जीवन में कुछ भी सार्थकता और कृतार्थता तक नहीं पहुंचता है।

वासनाओं की कैद में जो बंद हैं, और जिन्होंने विवेक का मुक्ताकाश नहीं जाना है उन्होंने जीवन तो पाया पर वे जीवन को जानने और जीने से वंचित रह गये हैं। पिंजड़ों में कैद पक्षियों और वासनाओं की कैद में पड़ी आत्माओं के जीवन में कोई भेद नहीं है।

विवेक जब वासना से मुक्त होता है, तभी वास्तविक जीवन के जगत में प्रवेश होता है।

●

**प्रभु को जानना है तो स्वयं को जीतो। स्वयं से ही
जो पराजित है, प्रभु के राज्य की विजय उनके लिए
नहीं है।**

आचार्य जी का दिमाग है या जादू ?

—शिव

८ अक्टूबर ६९ की प्रभात.. कोई ९॥ बजे नारायण और मैं आचार्य श्री के निवास पर पहुंचे तो दरवाजे पर ही देखा एक लाल रंग की गाड़ी खड़ी है। हमने एक दूसरे की आँखों में देखा और आँखों-आंखों में ही कहा—मालूम पड़ता है कोई मिलने आये। हमने धीमे से फाटक खोला और फिर द्वार को घेरे फूल-लताओं को स्नेह युक्त हाथों से अलग करते हुए भीतर 'स्टडी' में पहुंचे और पाया कि चार मित्र बैठे हैं, तीन पुरुष, एक महिला। इन चार में एक नगर के ही श्री नेमीचन्द जी हैं अन्य तीन से हम परिचित नहीं हैं पर वे बाहर से आये हुए प्रतीत होते हैं। बाद में पता चला कि वे गोंदिया से आये थे तथा जो मित्र आचार्य जी से बातें कर रहे थे उनका नाम श्री अम्बु भाई हैं। हमने लगभग दूर से इशारों में ही प्रणाम किया है लेकिन आचार्य श्री ने मुसकाते हुए उत्तर दिया है और पूछा है—कहो शिव, क्या हाल चाल हैं तुम्हारे ? मैंने धीमे से कहा है 'सब ठीक' है और आचार्य श्री पुनः उन मित्र से बातें करने लगे हैं।

कोई १० बजे मैंने महसूस किया कि अम्बू भाई की बातें अब समाप्त हो चुकी हैं लेकिन फिर भी अभी शायद आचार्य श्री को छोड़ना नहीं चाह रहे हैं। आचार्य जी के पास आने वालों का यह हाल नित ही देखने को मिलता है। अतः मैंने धीमे से पूछा है : "आचार्य जी, कृष्ण की गोपियों के सम्बन्ध में आप का क्या ख्याल है ?" प्रश्न को स्पष्ट करते हुए मैंने आगे कहा : "मेरा सीधा मतलब यह है कि कभी-कभी मैं आपके प्रति अत्यन्त मोह का अनुभव करता हूं और आपका जोर एक ही बात पर अधिक रहता है कि मैं अपने आप को पहचान लूं, बस यही एक उपलब्धि है। तो क्या मैं इस मोह को छोड़ने की कोशिश करूँ या डूबता ही चला जाऊँ और दीवानों की तरह घूमूं ? इन दोनों में हितकर क्या है ? क्या गोपियों का जो मार्ग है उसमें भी कोई उपलब्धि है ?"

आचार्य जी ने कहा : "निश्चित ही उसमें भी उपलब्धि है। असल में दो मार्ग हैं। एक तो यह कि 'मैं' नहीं....बस 'तू' ही तू ही, और जब 'मैं' पूर्णतः विसर्जित हो जाता है तो 'तू' भी गिर जाता है। दूसरा मार्ग है कि 'मैं' ही....मैं ही हूं सब में, सब मैं ही हूं, तू कहीं है ही नहीं। याने अहंकार जब पूर्ण होता है—अहं ब्रह्मास्मि—तो 'मैं' भी विलीन हो जाता है। अंत में 'होना' ही शेष रह जाता है। मार्ग दोनों है। पहुंचना दोनों से चलकर होता है। प्रत्येक को यह स्वयं समझना और तय करना होगा कि कौन सा मार्ग मेरे लिए उपयुक्त है।

आचार्य जी ने आगे कहा : "किसी का चित्त न किसी से बड़ा होता है, न छोटा होता है। सभी चित्त समान हैं तथापि दो प्रकार के चित्त होते हैं। एक स्त्रैण चित्त होता है, एक पुरुष चित्त होता है। स्त्रैण चित्त पुरुष को भी हो सकता है और पुरुष-चित्त स्त्री को भी हो सकता है। स्त्रैण चित्त passive होता है, निष्क्रिय, समर्पण का; पुरुष चित्त अग्रेसिव होता है। स्त्रैण चित्त कहेगा तू ही, तू ही, और पुरुष चित्त कहेगा मैं ही मैं ही। और उपलब्धि दोनों में है।"

तभी श्री अम्बु भाई ने कहा : "आचार्य जी, कृष्ण और राम जैसे लोग सचमुच कभी हुए थे या यह सब मात्र कल्पना है ? मुझे तो विश्वास नहीं होता।"

आचार्य जी ने कहा, "निश्चित ही हुए हैं। लेकिन वे इतने अनूठे व्यक्ति थे कि आज मानना कठिन ही होगा कि कभी वे हुए भी थे। वे इतने अद्भुत थे कि उनके रहने पर भी उन्हें मानना कठिन हुआ है। जैसा मैं सोच भी नहीं सकता, वैसा ही कोई 'हो' तो मानना कठिन हो जायगा। चम्पारन में एक अंग्रेज नील की खेती करता था। एक बार गाँधी वहां गये सत्याग्रह आन्दोलन चलाने। वह अंग्रेज बहुत परेशान था कि मजदूर सब बिगड़ जायेंगे। उसने सोचा इस आदमी को मरवा दें तो मामला हमेशा के लिए साफ हो जाय। उसने एक बदमाश को ५००० रुपये दिये कि गांधी जी सुबह जब टहलने निकलें तो उनकी हत्या कर देना। यह खबर गांधी को भी चल गई और सांझ साथियों ने बहुत समझाया कि कल टहलने न निकलें। गांधी ने कहा ठीक है मैं काफी देर से उजाला होने पर टहलने जाऊँगा। साथी निश्चिन्त सो गए। गांधी उस दिन तीन बजे ही उठ गए याने हमेशा से लगभग घण्टे भर पहिले और उन्होंने सीधे जाकर उस अंग्रेज का दरवाजा खटखटाया, अंग्रेज उठा और दरवाजा खोला तो हैरान रह गया। वह सोच भी नहीं सकता था कि जिसे वह मारना चाहता है वह खुद दरवाजे पर आ जायगा। गांधी ने कहा : सुना है मुझे मारने के लिये आप ५००० रुपये खर्च कर रहे हैं। तो ऐसा करें ५००० रुपये मेरे फण्ड को दे दें, और आप मुझे गोली मार दें। क्योंकि वहां, मेरे फण्ड को, पैसों की बड़ी जरूरत है और मेरे मर जाने पर मेरी लाश को कोई ५०० रुपये भी न देगा। अतः कृपा करें, ५००० रुपये मेरे फण्ड को दे दें और आप मुझे गोली मार दें। और वह अंग्रेज गांधी के पैरों पर गिर पड़ा और उसने अपनी किताब में लिखा है कि पहली बार मुझे विश्वास हो गया है 'जीसस' कभी हुआ था। इसके पहले मैं जीसस को मात्र कल्पना समझता था क्योंकि यह मेरी समझ के बाहर था कि किसी को सूली लगाई जाय और वह कहे कि 'हे परमात्मा इन्हें क्षमा कर देना क्योंकि इन्हें पता नहीं है कि ये क्या कर रहे हैं। तो ऐसे लोगों को मानना कठिन हो जाता है। लेकिन अब कृष्ण व राम जैसे व्यक्ति नहीं पैदा हो सकते। बुद्ध, महावीर जैसे हो सकते हैं, क्राइस्ट जैसे हो सकते हैं मगर कृष्ण व राम जैसे नहीं हो सकते। समाज की भी एक स्थिति होती है। अब अगर कोई माखन छीनकर खायेगा तो उसे जेल भेज दिया जायगा या पागलखाने भेज दिया जायगा। समाज की स्थिति ही ऐसी नहीं रही कि जिसमें कृष्ण जैसा व्यक्ति पुनः हो।

आचार्य जी ने श्री अम्बु भाई के ही प्रश्न का उत्तर देते हुए आगे कहा : 'दर-असल भारत में बुद्ध के पहले इतिहास लिखा ही नहीं गया। भारत को हिस्टॉरिक-सेन्स ही नहीं था। बुद्ध के बाद इतिहास लिखा गया। और अधिक ठीक से तो अंग्रेजों के बाद लिखा जाने लगा। लेकिन इतिहास घटनाओं का जोड़ है, उसमें व्यक्ति की झलक नहीं होती। वह शुष्क होता है। इतिहास बताएगा फलां का जन्म फलां तारीख को हुआ था। फलां गांव में हुआ था। अब यह निरर्थक ही है कि फलां का जन्म फलां तारीख को हुआ था। फलां का जन्म किसी भी तारीख को हुआ हो, क्या फर्क पड़ता है। यह कोई महत्व की बात नहीं है। तो इतिहास घटनाओं का वर्णन मात्र होता है। वह शुष्क होगा। उसमें कोई जान न होगी। उसमें व्यक्ति की झलक न होगी। व्यक्ति की झलक मिलती है कहानियों में, गीतों में, और कहानी और गीत प्रतीकात्मक भी हो सकते हैं। जैसे मान लो कोई एक चित्र बनाए जिसमें गांधी उंगली उठाए खड़े हों और अंग्रेज जहाजों में भरकर भगे जा रहे हों। अब यह उंगली का उठाना और अंग्रेजों का भागना, सचमुच में कभी हुआ नहीं है मगर यह संकेत है किसी बात का, इशारा देता है किसी चीज का लेकिन हजार-पांच सौ वर्ष बाद कोई अंध-भक्त कहेगा कि यह सच्ची घटना है, ऐसा हुआ है कि गांधी ने उंगली दिखाया और

अंग्रेज जहाजों में भर कर भाग गए। और अंध भक्तों का यह गलत दावा लोगों को यह समझने को मजबूर कर देगा कि गांधी कभी हुए ही नहीं, यह सब कल्पना है, कहानी है।

अब जैसे कृष्ण की ही बात लो। यह बिल्कुल जरूरी नहीं है कि वे सचमुच किसी दिन यमुना के किनारे गोपियों की चीर चुराये हों और गोपियों को उनके सामने नग्न होना पड़ा हो। उस कथा के हजार मतलब हो सकते हैं। जैसे उसका मतलब एक यह भी हो सकता है कि कृष्ण ऐसे थे कि उनके पास कोई नग्न होकर ही जा सकता था। उनके सामने कोई जाय तो वे उसके ऊपरी वस्त्र (व्यक्तित्व) छीन ही लेते थे और नग्न खड़ा कर देते थे। जैसे कृष्ण को माखन चोर कहते हैं। हो सकता है कृष्ण इतने सरल थे, इतने भोले थे कि गांव का हर घर उनका अपना घर था। हर चौका अपना चौका मालूम पड़ता था कि वे किसी भी चौके में जाकर खा सकते थे। आखिर मां से छीनकर खा सकते हैं न! हो सकता है कृष्ण ऐसे थे कि वे किसी से भी छीनकर खा सकते थे। अब कृष्ण का अंध भक्त कहेगा कि यमुना के तट पर गोपियों की जो कथा है, वह सच्ची घटना है। वह कहेगा कृष्ण ने उंगली पर गोवर्धन उठा लिया था, यह सच्ची घटना है। और अंध भक्तों के ये आग्रह और दावे उनके होने को ही संदिग्ध कर देते हैं। जैसे आप कह रहे हैं कि कृष्ण और राम जैसे व्यक्ति कभी हुए ही नहीं। फिर आदमी को यह मानना कठिन भी होता है कि वैसा मैं नहीं हूं तो कोई वैसा कैसे हो सकता है। नहीं, इतने अनूठे व्यक्तियों को मानने में कठिनाई होती है। मैं जो कह रहा हूं मेरी बात समझ रहे हैं न? जैसे मान लें आपको एक चित्र बनाने को कहूं जिसमें यह व्यक्त करना है कि कोई एक व्यक्ति है जिसके सामने बिना नग्न हुए नहीं जाया जा सकता या जिसके सामने जाने पर वह सारे वस्त्र छीन ही लेता है। अब कैसे बनायेंगे यह चित्र? किन्हीं प्रतीकों का सहारा लेना पड़ेगा न?

तो वे कथाएँ, वे गीत सभी प्रतीकात्मक हो सकते हैं। वे उस व्यक्ति के किसी अनूठेपन की ओर संकेत करते हैं। यह जरूरी नहीं है कि उनमें लिखी बातें सच ही हैं। वे किसी सच की ओर इंगित जरूर करती हैं। लेकिन अंधे भक्त उनके सच होने का दावा करने लगते हैं और फिर लोगों को मानना मुश्किल होता चला जाता है। इसीलिए मैं कहता हूं कि अनुयायी ही सदा नेता की हत्या करते हैं। अंध भक्त ही नेता के व्यक्तित्व को ढांक देते हैं।"

मैंने कहा : आचार्य जी, अंततः तो मुझे भी स्वीकार कुछ नहीं हो पाता। मैं इतना तो समझ गया हूं कि मैं कुछ भी स्वीकार नहीं कर पाऊंगा, किसी भी बात से मुझे तसल्ली नहीं मिलेगी मगर आगे करूं क्या, यह सब कुछ भी समझ में नहीं आता।

आचार्य जी मुसकराये और उन्होंने कहा : "तसल्ली के लिए जल्दी नहीं करना चाहिये। व्यक्तित्व धीरे-धीरे परिपक्व होता है और जब व्यक्तित्व परिपक्व हो जाता है तो वह अपने आप घट जाता है। जिसकी तुम बात कर रहे हो वह संतुष्टि, वह संतृप्ति, वह तसल्ली अपने आप चली आती है।"

मैंने कहा : "आचार्य जी, आपने किसी भाषण में कहा कि पूछें कि 'मैं' कौन हूं? 'मैं' कौन हूं? पूरी शक्ति से पूछें, एक भी कोना इस गूंज से खाली न रह जाय। जितनी तीव्रता से पूछेंगे उतना ही मन की गति क्षीण होती चली जायगी। तो मैं पूछना यह चाहता हूं कि इधर तो आप कह रहे हैं कि तसल्ली के लिए जल्दी न करना चाहिए। और उधर जो 'तीव्र' शब्द का आप उपयोग करते हैं याने तीव्रता से पूछने का, इस तीव्रता से पूछने में क्या तनाव नहीं होगा?"

आचार्य जी ने कहा : निश्चित ही, इसमें तनाव होगा। असल में बहुत सारे मार्ग हैं। मैं सभी मार्गों की बात करता हूं ताकि जिसे जो उपयुक्त लगे, वह उसी

मार्ग से बढ़े। तनाव का मार्ग भी पुरुष चित्त के व्यक्ति के लिए उपयुक्त होता है। और तनाव जब चोटी पर अपनी सीमा पर पहुंच जाता है तो भी चित्त शिथिल हो जाता है और व्यक्ति शांत हो जाता है।

मैंने कहा : आचार्य जी, क्या साधना के लिए शारीरिक स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना चाहिए ?

आचार्य जी ने कहा : कुछ तो रखना ही चाहिए, क्योंकि करना तो सब उसी से है लेकिन उसके लिए बहुत ज्यादा ध्यान जरूरी नहीं है।

इन्हीं बातों के साथ हमने आचार्य जी को प्रणाम किया और विदा ली। रास्ते में नारायण कहते हैं आचार्य जी का दिमाग है या जादू ? मैं कहता हूं तुम ठीक कहते हो मेरे दोस्त ? इनका दिमाग जादू ही है।

●●●

★ संसार में संसार के न होकर रहना सन्यास है, पर बहुत बार सन्यास का अर्थ उन तीन बंदरों की भांति लगा लिया जाता है जो कि बुरे दृश्यों से बचने के लिये आंख बन्द किये हैं, और बुरी ध्वनियों से बचने के लिये कान और बुरी वाणी से बचने के लिये मुख। बंदरों के लिये तो यह क्षम्य है लेकिन मनुष्यों के लिये अत्यंत हास्यास्पद, भय के कारण संसार से पलायन मुक्ति नहीं वरन् एक अत्यंत सूक्ष्म और गहरा बंधन है, संसार से भागना नहीं, स्वयं के प्रति जागना है। भागने में भय है, जागने में अभय की उपलब्धि! ज्ञान से प्राप्त अभय के अतिरिक्त और कुछ भी मुक्त नहीं करता है।

★ क्या तुम ध्यान करना चाहते हो ? तो ध्यान रखना कि ध्यान में न तो तुम्हारे सामने कुछ हो, न पीछे कुछ हो। अतीत को मिट जाने दो और भविष्य को भी, स्मृति और कल्पना—दोनों को शून्य होने दो फिर न तो समय होगा और न आकार ही होगा। उस क्षण जब कुछ भी नहीं होता है, तभी जानना कि तुम ध्यान में हो. महामृत्यु का यह क्षण ही नित्य जीवन का क्षण भी है।

गांधीवादी कहाँ हैं ?

(WHERE ARE THE GANDHIANS)

(अगले अंक में प्रस्तुत होने वाले आचार्यश्री के एक अभूतपूर्व प्रवचन की किरण ज्योति)

मैं निरंतर सोचता रहा, व्हेअर आर दी गांधीयन्स, गांधीवादी कहां हैं ? लेकिन मेरे भीतर सिवाय एक उत्तर के और कुछ भी शब्द नहीं उठा। मेरे भीतर एक ही शब्द उठ रहा है, वहीं हैं जहां हो सकते थे। यही सोचते हुये रात में सो गया। और सोने में मैंने एक सपना देखा। उसी से मैं अपनी बात शुरू करूंगा। यह सोचते हुये सोया था कि गांधीवादी कहां हैं, इसलिए सपना निर्मित हुआ होगा।

मैंने देखा कि राजधानी के एक बहुत बड़े बगीचे में जहां गांधीजी की एक बड़ी मूर्ति खड़ी है, मैं उस पत्थर की प्रतिमा के नीचे पड़ी हुई बेंच पर बैठा हुआ हूं। दोपहर है और बगीचे में सन्नाटा है। कोई भी नहीं है। मैं सोचने लगा कि गांधीजी से पूछ क्यों न लिया जाये गांधीवादी कहां हैं ? लेकिन इसके पहले कि मैं पूछता, मैंने देखा कि गांधीजी की प्रतिमा कुछ कह रही है। तो मैं बहुत गौर से सुनने लगा। गांधीजी की प्रतिमा कह रही थी कि नेताओं ने मुझे कहां खड़ा कर दिया है। धूप में, वर्षा में, सर्दी में। और राणाप्रताप को घोड़ा दिया हुआ है, शिवाजी को घोड़ा दिया हुआ है, रानी लक्ष्मीबाई को घोड़ा दिया हुआ है। मुझे पैर पर ही खड़ा कर दिया है। मैं बहुत हैरान हुआ। नहीं मैंने सोचा था कि गांधीजी गुस्सा होते हैं। मैं भागा हुआ राजधानी के बड़े नेता के पास गया कि गांधीजी बहुत गुस्से में हैं, बहुत नाराज हो रहे हैं कि मुझे नेताओं ने कहां खड़ा कर दिया है। मुझे भी घोड़ा चाहिए। उन नेताओं ने कहा ऐसा कभी नहीं हो सकता, गांधीजी कभी नाराज नहीं हो सकते। मैं तुम्हारे साथ चलता हूं। मैंने उन नेता को ले जाकर प्रतिमा के सामने खड़ा कर दिया। उस प्रतिमा ने कहा, मैंने घोड़ा लाने को कहा था तो इस गधे को कहां से ले आये। मैं हैरान हुआ। यह तो मैंने कभी सोचा भी नहीं था। उनके इस कहने से उस नेता का क्या हुआ, मुझे कुछ पता नहीं। मेरी नींद टूट गई और रात में बराबर सोचता रहा तो मुझे कुछ बातें ख्याल आईं।

संत, ईश्वर..... अन्तरानुभूति और हम....?

संकलन : श्री नारायण श्रीवास्तव

(जबलपुर में तारण तरण जयंती—सर्व-धर्म सम्मेलन पर दिया गया आचार्य श्री का अध्यक्षीय भाषण)

एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी बात शुरू करना चाहता हूं। एक सम्राट बूढ़ा हो गया था। उसकी मृत्यु निकट थी। वह बहुत ही चिंतित था कि अपने तीन बेटों में से किसे साम्राज्य सौंपे। तीनों ही बेटे योग्य थे और चुनाव करना बहुत मुश्किल था। गांव में ठहरे हुए एक वृद्ध फकीर को उसने पूछा। उस फकीर ने परीक्षा का एक रास्ता बताया वे तीनों बेटे बुला लिए गए। उस सम्राट ने एक-एक हजार रुपये उन तीनों बेटों को दिए। और उनसे कहा कि इन रुपयों से अपने अपने महल को आज संध्या तक पूरी तरह भरने की तुम कोशिश करना। जिसका महल सर्वाधिक भरा हुआ पाया जायेगा वही इस साम्राज्य का मालिक होगा। मैं संध्या तुम्हारी परीक्षा को आ रहा हूं। वे तीनों बेटे बहुत हैरान हुए, उनके पास बहुत बड़े-बड़े महल थे और एक हजार रुपयों में उन महलों का कुछ भी नहीं हो सकता था। बड़े बेटे ने सोचा यह तो बहुत मुश्किल बात मालूम होती है। हजार रुपये में कंकड़-पत्थर भी नहीं मिल सकते, हीरे-जवाहरात तो बहुत दूर की बात है। और हीरे-जवाहरात से महल न भरा गया तो महल क्या भरा गया मालूम होगा? सम्राट क्या राजी होगा? उसने सांझ तक बहुत चिंता की और जैसा चिन्ता करने वालों का परिणाम होता है, वह इतना घबड़ाया सांझ तक, कि उसने शराब पी ली। सोचा शायद शराब पीने से चिन्ता कम हो जाये। जब सम्राट उसके द्वार पर पहुंचा तो द्वार बंद था, भवन अंधकार में था और उसका बेटा द्वार के बाहर सीढ़ियों पर बेहोश पड़ा था। उसने उसे हिलाया और पूछा कि रात हो गई, मैं आ गया हूं। महल खाली और अंधेरे से भरा है। मैं पूछना चाहता हूं कि वह जो महल तुम्हें भरने को कहा था उसका क्या हुआ? महल भरा नहीं गया? उस युवक ने आँखें खोली और कहा : आप कौन हैं? कैसा महल? कैसे रुपये? भरने की कौन सी बात? वह तो बेहोश था! **अधिक लोग जीवन को इसी भांति बेहोशी में खो देते हैं और उन्हें पता भी नहीं चलता कि जीवन एक भवन था और उस भवन को भरना था और जीवन के बाद कोई पूछने को था।** वह सम्राट दूसरे राजकुमार के महल पर पहुंचा। उस दूसरे राजकुमार ने बहुत चिंता की और तब पाया कि सिवाय कूड़े-करकट से महल को भरने के और कोई उपाय नहीं था। हजार रुपये बहुत कम थे। उनसे हीरे नहीं खरीदे जा सकते, स्वर्ग नहीं खरीदा जा सकता। उसने गांव के बाहर फेंके जाने वाले कचड़ा घरों से सारा कचड़ा बुलवा लिया और सारे महल को कूड़े और कचड़े से भर दिया। महल जरूर भर गया और वह खुश था। लेकिन महल के चारों ओर दूर तक दुर्गन्ध फैल गई थी। सम्राट आया तो महल के पास जाना भी मुश्किल था। महल के पास जाकर वह पूछने लगा : यह तूने क्या किया? युवक कहने लगा : आप स्वयं समझ लें, हजार रूपयों की सीमा है, महल बहुत बड़ा है। सिवाय कचड़े के और किसी चीज से इसे भरा नहीं जा सकता था। लेकिन मैंने इसे पूरा भर दिया है, एक छोटा सा कोना भी खाली नहीं है। परीक्षा में मुझे

उत्तीर्ण होना ही चाहिए। कूड़े-करकट से महल को भरा तो जा सकता है लेकिन उसे भरा हुआ महल नहीं कहा जा सकता। जीवन में कुछ लोग पहले राजकुमार की तरह बेहोशी में समय खो देते हैं, कुछ दूसरे लोग बेहोशी में तो समय नहीं खोते, बहुत होश से जीते हैं, लेकिन अंततः सिवाय कूड़े और कचरे के अपने भवन को और किसी चीज से नहीं भर पाते। वह सम्राट तीसरे राजकुमार के महल पर पहुंचा। वह महल तो बिल्कुल खाली था, जरा भी भरा नहीं गया था। सम्राट पूछने लगा : महल को तुमने भरा नहीं ? वह राजकुमार हँसने लगा। उसके हाथ में वीणा थी और वह वीणा बजा रहा था। बार-बार सम्राट कहने लगा : तुम हंसते हो, महल को तुमने भरा नहीं ? वह राजकुमार कहने लगा मैंने महल तो भरा है। जिनके पास आंखें हैं उन्हें दिखाई पड़ सकता है। उस सम्राट ने बहुत गौर से देखा। महल बिल्कुल खाली था। उसने कहा मुझे तुम धोखा देना चाहते हो ? लेकिन साथ में वह बूढ़ा फकीर भी था। उसने कहा—यह राजकुमार सम्राट हो गया। महल उसने भरा है सम्राट, लेकिन आपको दिखाई नहीं पड़ता। महल में उसने हजारों दिए जलाए थे। उन हजारों दियों से प्रकाशित हो गया था सारा भवन, एक-एक कोने तक प्रकाश भरा था। महल में उसने फूलों की वर्षा की थी। सारा महल सुगंध से भरा था। वह हाथ में वीणा बजाता था। सारे भवन में वीणा का संगीत गूंज रहा था। वह फकीर कहने लगा : **महल भरा है आलोक से, महल भरा है संगीत से, महल भरा है सुगंध से; लेकिन सम्राट बहुत थोड़े लोग ही इस सब को देखने में समर्थ होते हैं।**

इस कहानी से मैं क्यों शुरू करना चाहता हूं। मेरी दृष्टि में **धर्म जीवन के महल को सुगंध से, संगीत से और प्रकाश से भरने की विधि के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। धर्म है जीवन को प्रकाश से भरने की विधि, धर्म है जीवन को सुगंध से भरने की विधि।** धर्म का हिन्दू, मुसलमान, जैन और ईसाई से कोई भी संबंध नहीं है। और न ही धर्म का उन धर्म-शास्त्रों से सम्बन्ध है जिनकी पूजा करके, जिनका अध्ययन और मनन करके हम सोचते होंगे कि हम जीवन को सुगंध, प्रकाश और संगीत से भर लेंगे। धर्म-शास्त्रों को पढ़ने वाले लोग सिवाय कूड़े और खोटे शब्दों के अतिरिक्त अपने जीवन को किसी और चीज से भर नहीं पाते। संत तारण ने कहा है : **पंडित नहीं पहुंच सकता है वहां जहां धर्म है।** पंडित शब्दों से भरा हुआ आदमी है। और धर्म के ऊपर पंडितों ने हजारों वर्षों से कब्जा कर रखा है। धर्म की व्याख्या पंडित कर रहे हैं। धर्म को पंडित समझा रहे हैं। धर्म की रूप रेखा को पंडित टीकाएं दे रहे हैं। और उन सब ने धर्म को सत्य कहीं रहने दिया, धर्म को शब्दों की बातचीत बना दिया है। स्वभावतः **सम्प्रदाय उनके शब्दों के उहापोह के कारण पैदा हुए हैं। सम्प्रदाय शब्दों के प्रति हमारे अति मोह और आग्रह से जन्मे हैं। एक ग्रन्थ एक सम्प्रदाय बन जाता है, दूसरा ग्रन्थ दूसरा सम्प्रदाय बन जाता है, तीसरा ग्रन्थ तीसरा सम्प्रदाय बन जाता है। और धर्म का एक भी ग्रन्थ नहीं है। धर्म का कोई ग्रन्थ हो भी नहीं सकता।** ग्रन्थ हैं दुनिया में, लेकिन धर्म का कोई ग्रन्थ नहीं है। क्योंकि धर्म को कहने के लिए आज तक कोई भी शब्द समर्थ नहीं हो पाया है। लाओत्से का नाम शायद आपने सुना हो। वह ८० वर्ष तक जिया। जीवन भर अनेक लोगों ने उससे प्रार्थना की कि धर्म के सम्बन्ध में कुछ लिखो। वह हंसता और कहता : **जो भी लिखा गया है वह धर्म नहीं है और जो धर्म है वह लिखा नहीं जा सकता है।** लेकिन उसकी मृत्यु करीब आने लगी। लोग बहुत पीछे पड़े और नहीं माने। उसने एक किताब लिखी। और उस किताब की पहली ही पंक्तियों में लिखा कि मेरी किताब को जो पढ़े वह पहले इन पंक्तियों को ठीक से समझ ले। सबसे पहले मैं यह कहना चाहता हूं कि **सत्य को कहा नहीं जा सकता है। और जो भी कहा जा सकता है वह सत्य नहीं होगा। सत्य को आज तक नहीं कहा गया है। और हमारे जितने ये धर्म और सम्प्रदाय हैं वे कही गई बातों पर निर्भर हैं और खड़े हैं।** और सत्य को आज तक नहीं कहा गया है, न महावीर ने कहा है, न बुद्ध ने, न कृष्ण ने, न क्राइस्ट ने। सत्य को आज

तक नहीं कहा गया है, नहीं कहा जा सकता है। सत्य एक अनुभव है और ऐसा अनुभव, कि तब उपलब्ध होता है जब हमारे चित्त से सारे शब्द छूट गए होते हैं, जब हम निःशब्द में होते हैं, तब सत्य का साक्षात्कार होता है, निःशब्द में जिसे जाना है, उसे शब्द में कहने का कोई भी उपाय नहीं है।

एक महाकवि समुद्र के तट पर गया हुआ था। वह जब समुद्र के तट पर पहुंचा, सुन्दर थी सुबह, आकाश से सूरज की किरणें बरसती थीं, सागर की उठती हुई लहरों पर नृत्य था, बड़ी सुवास थी, बड़ी शांति थी, बड़ा सन्नाटा था। वह मंत्र मुग्ध होकर नाचने लगा। फिर उसे ख्याल आया अपनी प्रेयसी का, जो दूर किसी देहात में एक अस्पताल में बीमार पड़ी थी। उसके मन में हुआ, काश, आज उसकी प्रेयसी भी यहां होती, वह भी इस सौंदर्य को जानती, वह भी दर्शन करती इस सत्य का, सुबह के सूरज का इस सुबह के सागर का, इन हवाओं का नृत्य देखती। लेकिन नहीं, वह आज दूर पड़ी है। मैं क्या करूँ मैं कैसे उसे इस अनुभव को पहुंचाऊँ? वह भागा हुआ बाजार गया। एक बहुत बहुमूल्य पेटी खरीद लाया। उस पेटी में उसने सूरज की रोशनी बंद की, हवाओं को बन्द किया, सागर के उस नाचते हुए वातावरण को बन्द किया। पेटी को सब तरफ से बन्द किया कि उसमें जो भीतर बन्द किया है वह निकल न जाये, फिर ताले जड़े। और एक पत्र के साथ वह पेटी अपनी प्रेयसी के पास भेजी। उस पत्र में उसने लिखा एक बहुत अद्भुत अनुभव मुझे हुआ। सौंदर्य को मैंने पहली बार साक्षात् किया है, पहली बार मैंने ऐसा सुन्दर सूरज देखा, ऐसी सागर की हवाएं देखीं। सब बन्द कर पेटी में तुझे भेजता हूं, तू जरूर खुश होगी। वह पेटी पहुंच गई। वह पत्र पहुंच गया। उसकी प्रेयसी ने ताला खोला, लेकिन पेटी के भीतर कुछ भी न था। न वहां सूरज की करणें थीं, न वहां सागर की हवाएं थीं। वहां तो कुछ भी न था, पेटी बिल्कुल खाली थी। वह बहुत हैरान होने लगी। जो लोग सत्य के सागर के किनारे पहुंचे हैं, चाहे महावीर हों, चाहे बुद्ध, चाहे क्राइस्ट, चाहे नानक, चाहे तारण, उन्होंने सत्य के उस सागर के किनारे जाकर जो अनुभव किया है, उनके प्राणों में करुणा उठी है और उन्होंने चाहा है कि अपने प्रेमियों तक पहुंचा दें उसे, जो उन्होंने जाना है। और शब्दों की पेटियों में भरकर उन्होंने हमारे पास भेजा है। उनकी करुणा प्रगट होती है उनकी शब्दों की पेटियों से, उनका प्रेम प्रगट होता है उनकी पीड़ा प्रगट होती है कि वे अपने अनुभव को हमारे साथ साझीदार बनाना चाहते हैं, वे अनुभव को हमसे बांटना चाहते हैं। लेकिन हमारे पास जब उनकी शब्द की पेटियां आती हैं उनके शास्त्र आते हैं, तो सिर्फ शब्द आते हैं, कागज आते हैं, अनुभव वहीं सागर के किनारे ही छूट जाता है, हमारे पास नहीं आता। किताबें हमारे पास पहुंच जाती हैं। और हम ऐसे नासमझ हैं कि उन किताबों को धर्म मानकर बैठ जाते हैं और सागर की यात्रा कभी भी नहीं हो पाती। धर्म का कोई भी ग्रन्थ नहीं है। जब तक यह सत्य स्पष्ट नहीं होगा मनुष्य को कि धर्म का कोई भी ग्रन्थ नहीं है तब तक धर्मों के सम्प्रदायों की समाप्ति नहीं हो सकती। जिस दिन यह ज्ञान होगा कि धर्म एक अनुभव है जो शब्दों के बाहर है, जिस दिन यह प्रतीति होगी कि धर्म-ग्रन्थों में किन्हीं की करुणा, किन्हीं का प्रेम और किन्हीं का यह भाव जरूर प्रगट हुआ है कि वे अपने अनुभव में हमें साझीदार बनाना चाहते हैं, लेकिन अनुभव कुछ ऐसा है कि उसमें कोई किसी का साझीदार नहीं हो सकता है। जिस दिन धर्म ग्रन्थ हमें धर्म-ग्रन्थ नहीं होगा बल्कि किसी दूर के सागर की प्रेरणा बनेगा, सिर्फ प्यास जगाएगा, असंतोष जगायेगा और हमारे प्राणों को इस खबर से भर देगा कि जरूर जिन्होंने भेजा है, जहां से भेजा है, वहां कोई अनुभव होगा जिससे हम वंचित हैं। काश! उस गांव में पड़ी हुई उस प्रेयसी ने उस पेटी को छोड़कर सागर की यात्रा की होती, सोचा होता कि खाली पेटी आ गई है लेकिन जिसने भेजा था जरूर भरी भेजी होगी, अन्यथा वह भेजता नहीं। भरी पेटी पहुंची खाली,

महावीर ने जब कहा होगा तो उन शब्दों में भर दिया होगा वह सब जो उन्हें अनुभव हो रहा था लेकिन शब्दों में अनिवार्य रूपेण उसे भरा नहीं जा सकता है, हमारे पास खाली शब्द खाली कारतूस की तरह पहुंचते हैं और उन्हीं शब्दों के ऊपर हमारे सारे सम्प्रदाय खड़े हो जाते हैं। हिन्दू, मुसलमान, जैन, ईसाई, और बौद्ध, ग्रन्थों के आस-पास खड़े हुए लोगों की भीड़ है। और जब तक हमारा यह ख्याल है कि ग्रन्थ हमें सत्य दे सकते हैं तब तक इन भीड़ों से छुटकारा नहीं हो सकता। और तब तक दुनिया में जिस एक धर्म की बात चलती है उस धर्म का हमें अनुभव भी नहीं हो सकता।

सच तो यह है कि जैसे हम यह स्वीकार करते हैं कि अनेक धर्म नहीं हैं दो, तीन, चार और पांच धर्म नहीं वैसे हमें 'एक' धर्म कहना भी छोड़ देना चाहिए। क्योंकि एक का कोई अर्थ नहीं रह जाता अगर दो, तीन और चार न हों तो। धर्म है, अधर्म है। एक धर्म भी नहीं है क्योंकि उस 'एक' धर्म के पीछे भी बुनियाद में वही भाव सरकता है कि वह एक धर्म कौन सा? और जब जैन सुनता है कि एक ही धर्म है तो वह बहुत गहरे में जानता है कि वह धर्म जैन धर्म है। और जब हिन्दू सुनता है कि एक ही धर्म है तो वह बहुत गहरे में जानता है कि—बिल्कुल ठीक है यह बात, वह एक ही धर्म वही धर्म है जो वेदों में लिखा है। और जब मुसलमान सुनता है तो वह भी मानता है कि बिल्कुल ठीक है, उसका भी सिर हिलता है, लेकिन उसके भी भीतरी मतलब यह होते हैं कि वह 'एक' ही धर्म इस्लाम धर्म है। जब तक हम 'एक' ही धर्म की बात करते हैं तब भी हम बहुत गहरे में मनुष्य के सम्प्रदाय को चोट नहीं पहुंचा सकते। जब तक हम यह न कहें कि धर्म है, न एक है, न दो है, न तीन है, और वह धर्म न हिन्दू है, न मुसलमान है, न ईसाई है, न जैन है, न बौद्ध। और जो आदमी जब तक हिन्दू है, मुसलमान है, ईसाई है, जैन है तब तक धर्म से संबंधित नहीं हो सकता है। वह जो धर्म है, उसका अनुभव जरूर उपलब्ध हो सकता है, लेकिन उस धर्म का ज्ञान उपलब्ध नहीं हो सकता। धर्म का कोई ज्ञान उपलब्ध नहीं हो सकता। धर्म का अनुभव उपलब्ध हो सकता है। ज्ञान उपलब्ध होता है शास्त्रों से, शब्दों से। धर्म उपलब्ध होता है स्वयं के अंतस में गहरे प्रवेश से। अगर मैं प्रेम की बात करूं तो दो बातें हो सकती हैं। मैं कहूं प्रेम जानने जैसा है। आप में से एक व्यक्ति उठे, जाय प्रेम की दुनिया में कूद पड़े। एक दूसरा व्यक्ति उठे और। जाय पुस्तकालय में, और प्रेम के सम्बन्ध में जितनी किताबें लिखी हैं उनको पढ़ने लग जाय। ये दोनों ही प्रेम की खोज में गए। एक गया 'प्रेम' की खोज में, जहाँ स्वयं को मिटा देना होगा और एक गया प्रेम के शास्त्री की खोज में, जहां से वह और बड़ा ज्ञानी और अहंकार से भरकर वापस आ जायगा। प्रेम के संबंध में किताबें हैं लेकिन किताबों से कौन कब प्रेम को जान पाया है? समुद्र में 'तैरने' के संबध में कोई आदमी सारी किताबें पढ़ डाले, वह इन किताबों को पढ़कर 'तैरने' का पंडित बन जाय, व तैरने पर पी. एच. डी. लिखे, वह 'तैरने' पर बड़ा शास्त्री हो जाय, वह तैरने पर समझाये और प्रवचन दे। लेकिन एक बात ध्यान रखना कि उसे नदी में धक्का मत दे देना, क्योंकि वह तैरने के संबंध में जानता है, 'तैरने' को नहीं। और यह भी हो सकता है कि एक आदमी जो हजारों मील तैरा हो, अभी आपको मिल जाय और आप उससे पूछने लग जायें कि तैरना क्या है, तो वह शायद हक्का-बक्का खड़ा रह जाय और कुछ भी न बता सके। **संत सदा हक्के-बक्के खड़े रह गए हैं। उन्हें बताना मुश्किल हुआ है कि धर्म क्या है। उन्होंने यह तो बताया है कि अधर्म क्या है, लेकिन यह नहीं बताया कि धर्म क्या है; उन्होंने यह तो बताया है कि असत्य क्या है, लेकिन यह नहीं बताया कि सत्य क्या है; उन्होंने यह तो बताया है कि ये-ये व्यर्थ है इसे छोड़ देना, लेकिन यह नहीं बताया कि सार्थक क्या है जिसे उपलब्ध करना है। वह जो सार्थक है वह जो सत्य है, वह जो अनुभव है, वह जो धर्म है उसे जिया जा सकता है, अनुभव किया जा सकता है। उसे बताने, शब्दों में कहने, समझने का कोई भी उपाय नहीं है।** वह जीवन का परम रहस्य है। एक फकीर एक गांव

से गुजरता था । साँझ थी, सूरज ढल गया और एक छोटा सा बच्चा एक हाथ में दिया लिए हुए मंदिर की तरफ जाता था । उस फकीर ने उस बच्चे को रोका और कहा कि मेरे बेटे—यह दिया तूने जलाया है ? तू ही मंदिर चढ़ाने जाता है ? वह छोटा सा बच्चा बोला : मैंने ही जलाया है और मैं मंदिर में भगवान को समर्पित करने जाता हूं । वह फकीर पूछने लगा : तूने ही जलाया है तो एक छोटी सी बात तू जरूर बता सकेगा । इस दिये में ज्योति कहां से आई ? उस बच्चे ने फकीर की आंखों की तरफ देखा, फिर दिये की तरफ देखा, फिर एक फूंक मार के दिया बुझा दिया और उस फकीर को पूछा : दिया आपके सामने बुझ गया, क्या आप बता सकते हैं ज्योति कहां चली गई ? और अगर आप बता सकें कि ज्योति कहां चली गई है तो फिर शायद मैं भी कोशिश करूं कि ज्योति कहां से आई थी । मैंने सुना है—वह फकीर उस बच्चे के पैरों पर गिर पड़ा और उसने कहा कि तूने पहली बार, जो बड़े-बड़े धर्म-ग्रन्थों से मुझे उपलब्ध नहीं हुआ, जो बड़े गुरुओं के सत्संग में बैठकर मुझे ख्याल में नहीं आया, पहली बार तूने मेरे अज्ञान को स्पष्ट कर दिया । पहली बार मुझे ख्याल आया कि एक दिये की छोटी सी ज्योति को भी हम नहीं जानते हैं तो जीवन की ज्योति को हम कैसे जान सकते हैं । धर्म जीवन की ज्योति को जानने, अनुभव करने, जीने की कला और विधि है । और जो व्यक्ति जीवन की इस रहस्यपूर्ण ज्योति को जिसके साथ हम २४ घण्टे मौजूद हैं, जिसके बिना हम एक क्षण नहीं हो सकते हैं, जिसके बिना हमारे होने का कोई उपाय नहीं है, उस जीवन की ज्योति को कैसे हम जानें ? क्या रास्ता है ? क्या हम उस जीवन की ज्योति के सम्बन्ध में जो सिद्धांत और व्याख्यायें की गई हैं, उसको कण्ठस्थ कर लें ? क्या कबीर ने, दादू ने, तारण ने जो कहा है, उसे याद कर लें ? उपनिषदों में, वेदों में, समयसार में जो कहा है उसे पकड़ लें, तो हम जीवन की उस ज्योति को जानने में समर्थ हो जायेंगे ? क्या वे व्याख्यायें हमारे हाथ में राख की तरह नहीं है ? क्या उन व्याख्याओं से जीवन की जागती हुई जिन्दा अग्नि को पहचाना जा सकेगा ? आज तक सिद्धांतों को पकड़ने से कोई भी सत्य तक कभी भी नहीं पहुंचा है । **पापी तो पहुंच भी जाते हैं परमात्मा तक, लेकिन पंडित कोई कभी पहुंचा हो, ऐसा सुनने में नहीं आया है ।** पंडित नहीं पहुंच सकता है, उसके पास सिवाय शब्दों के और कुछ भी नहीं है । संत और पंडित में एक ही फर्क है । संत, पंडित नहीं है । संत जो कह रहा है उसे जान रहा है और जी रहा है इसलिये कह रहा है । और पंडित जो कह रहा है, पढ़ रहा है, सुन रहा है, दूसरों ने जो कहा है उसे दोहरा रहा है । पंडित एक बासा आदमी है, उधार, मुर्दा, मरा हुआ । और पंडितों के आस-पास हमारे सारे धर्म खड़े हुए हैं । संतों के आस-पास कोई भी धर्म खड़ा हुआ नहीं है । कोई सोचता हो कि संत तारण के पास कोई धर्म खड़ा है तो भ्रम में है । संतों के पास कोई धर्म नहीं खड़ा है । **क्योंकि संतों के पास खड़ा होना जलती हुई आग के पास खड़ा होना है । हम ठंडी चीजों के पास, राख के आस-पास खड़े हो सकते हैं । संतों के पास हम कभी खड़े नहीं हो सकते । इसलिये संत जब मर जाते हैं, तब उनकी पूजा शुरू होती है । जब संत होते हैं तब भी उनकी पूजा होती है लेकिन वह पूजा पत्थरों से, जूतों से और गोलियों से होती है । और संत जब मर जाते हैं तब संतों की लाश पर पंडित बैठ जाते हैं और फिर उन लाशों की पूजा चलती है ।** दुनिया के जीवित संत के पास हमने ही इकट्ठे होकर सिवाय अपमान के और कभी कुछ नहीं किया है । और मरे हुए सन्तों के लिए हम फिर सैकड़ों संत वर्षों तक श्रद्धा देते हैं और सम्मान करते हैं । **तारण जब जिन्दा थे तो हमने उनके साथ क्या किया था? हमने कोई सद्व्यवहार नहीं किया और जब जीसस जिन्दा थे तो हमने उस आदमी को सूली पर लटका दिया और जब सुकरात जिन्दा था तो हमने जहर पिलाया और जब महावीर जिन्दा थे तो हमने कानों में खीले ठोंके और हमने जंगली कुत्तों को उनके पीछे दौड़ाया और जब बुद्ध जिन्दा थे तो हम जो भी अपमान कर सकते थे, वह हमने किये** लेकिन अब हम उनकी पूजा कर रहे हैं । और फिर हम यह कहते हैं कि हम इन सतों की पूजा इसलिये करते

है कि सन्तों से हमें बड़ा प्रेम है। और फिर हम यह कहते हैं कि जितने हम सन्तों के समारोह मनायेंगे, उतना ही दुनिया में धर्म होगा। झूठी है यह बात। यह नहीं हो सकता। **मुर्दा सन्तों से कुछ भी नहीं हो सकता।** क्योंकि मुर्दा सन्तों के पूजने में हमारी तरकीब है, हम बहुत होशियार लोग हैं, हम बहुत बेईमान, कनिंग और चालाक लोग हैं। हमारी तरकीब हैं इसमें हम जिन्दा सन्त को तो गोली मार देंगे और मुर्दा सन्त की पूजेंगे क्योंकि मुर्दा सन्त हमें कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकता, वह हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। **जिन्दा सन्त एक आग है, उसके पास जाने का मतलब सिवाय जलने के और कुछ भी नहीं होता। और जिनको खुद को जला देने की हिम्मत होती है वो संतों के पास पहुंचते हैं और जिनके मन में आस रह जाती है कि जिन्दा के पास नहीं पहुंच पाये, वे मुर्दों की प्रशंसायें करते रहते हैं और समारोह मनाते रहते हैं।** मैं आपसे कहना चाहता हूं कि अब तक पृथ्वी धार्मिक नहीं हो सकी, उसका एक कारण बुनियादी यह है कि हमने सदा मरे हुए सन्तों की प्रशंसा की है और जिन्दा सन्तों से हम सदा दूर रहे हैं। और जब तक यह पृथ्वी जीवित.... और आज भी जीवित लोग हैं, सन्तों से पृथ्वी खाली नहीं हो गई है। मैं एक यूनिवर्सिटी में बोल रहा था। उस विश्वविद्यालय के कुलपति ने मुझसे पहले बोलते हुए यह कहा कि मेरे मन में कई बार यह ख्याल उठता है कि अगर मैं भगवान बुद्ध के समय में होता तो उनके चरणों में बैठता और उनसे जाकर ज्ञान-उपदेश लेता। मेरे मन में यह ख्याल होता है कि अगर मैं महावीर के समय में होता तो उनको देखकर धन्य होता। मैं उनके पीछे बोला तो मैंने उनसे पूछा कि उनसे यह पूछना चाहता हूं, अब यह बात तो बहुत मुश्किल है क्योंकि महावीर के वक्त में अब आप नहीं हो सकते हैं। अब आप बुद्ध के वक्त में नहीं हो सकते हैं। मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि आपकी उम्र ६० वर्ष पार कर रही है। आप जिन्दा किसी फकीर के पास गए हैं। इस जमीन पर ६० वर्षों में कोई आदमी नहीं था ऐसा जिसके चरणों में आप बैठते। मैं इन्हें भली भांति जानता हूं। राजनीतिज्ञों के चरणों में वे मुझे बैठे हुए दिखाईपड़े हैं, धन पतियों के चरणों में उन्हें बैठे हुए मैंने देखा है। लेकिन फकीरों की तरफ जाते हुए उनके चरण मुझे कभी दिखाई नहीं पड़े। वे थोड़े घबड़ाए। मैंने उनसे कहा : **आप बुद्ध के समय में भी थे, और महावीर के समय में भी थे। मैं आपसे कहता हूं कि उस वक्त भी आप राजाओं के पास बैठे थे, धनपतियों के पास बैठे थे। उस दिन भी आप फकीरों के पास नहीं गए। और आज भी आप नहीं गए और आप कभी नहीं जायंगे। मुर्दा फकीरों को सम्मान देना बहुत आसान है** मन को बड़ी तृप्ति मिल जाती है कि हम भी बुद्ध, महावीर को सम्मान दे रहे हैं, कबीर को तारण को दादू को सम्मान दे रहे हैं। इन धोखों से कुछ भी नहीं हो सकता है। जिन्दगी हमेशा वही है। **आज भी पृथ्वी पर वो लोग हैं जो सत्य को जानते हैं। आज भी पृथ्वी पर वो लोग हैं जिनका जीवन ईश्वर का जीवन है। लेकिन नहीं, हमारे पंडित उनसे लड़ेंगे और दूर भागेंगे और हमारा समूह और हमारी भीड़ उनकी बातों से चौंकेगी उसी तरह जैसे वह तारण की बातों से चौंकती थी। और महावीर की बातों से चौंकती थी और बुद्ध की बातों से चौंकती थी। हम बहुत अजीब लोग हैं। हमने इतिहास के अनुभव से कुछ भी नहीं सीखा है। अगर आपको संत तारण के प्रति कोई भी प्रेम है तो फिकर छोड़ें उनकी, और खोजें जमीन पर। आज भी लोग हैं, इस गांव में भी हो सकते हैं, छोटे देहात में भी हो सकते हैं। खोजें किसी जिन्दा आदमी को जिसकी आंख में सत्य की झलक दिखाई पड़ती हो, जिसके प्राणों में कोई पुकार सुनाई पड़ती हो।** लेकिन नहीं, उसको आप नहीं खोजेंगे। वह आदमी खतरनाक है, उसके पास जाने में आपको बदलना पड़ेगा। उसके पास जाकर आप वही नहीं रह सकते, जो आप हैं। उसके पास जाने का मतलब एक रूपान्तरण है। उसके पास जाने का मतलब यह है कि आपको अपने को तोड़ना पड़ेगा, आपको अपने को नया करना पड़ेगा, आपको अपने को फिर से ढालना और बनाना पड़ेगा। कोई मरा हुआ संत आपको बदल

नहीं सकता है, इसलिए आप मजे से उसकी पूजा किये चले जाते हैं। **अब तक हमने दो ही काम किए हैं : जिन्दा सन्त का अपमान किया है और मरे सन्त का सम्मान किया है। जब तक दुनिया में मरे सन्तों का सम्मान है तब तक यह दुनिया मुर्दों की तरह रहेगी। इसमें कभी धर्म का जन्म नहीं हो सकता।** लेकिन हमारी आँख जिन्दा आदमी को खोजने में असमर्थ है, उसके कई कारण हैं। पहली तो बात यह है कि हम किसी जिन्दा आदमी को सन्त मानने को कभी राजी नहीं हो सकते क्योंकि हमारे अहंकार को बड़ी चोट लगती है, कि यह आदमी और सत्य को जानता है। नहीं यह कभी नहीं हो सकता। हाँ, मरे हुए आदमी से हमारे अहंकार की कोई टक्कर नहीं रह जाती। उससे हमें कोई दिक्कत नहीं रह जाती। मैं आपसे कहता हूं कि अगर संत तारण तरण यहां मौजूद हों, आप मानने को राजी नहीं होंगे कि उनको सत्य उपलब्ध हो गया है। अगर महावीर यहां खड़े हो जायें तो आप मानने को राजी नहीं होंगे कि उनको सत्य उपलब्ध हो गया है। क्योंकि जिन्दा आदमी, आप ही जैसा आदमी, आपही जैसा शरीर, आप ही जैसा उठना और बैठना, कैसे आप मान सकते हैं कि जो आपको नहीं मिला है, वह इस आदमी को मिल सकता है। नहीं, हमारे अहंकार को बड़ी चोट लगती है। हमारा अहंकार कभी यह मानने को राजी नहीं होता कि इस आदमी को कुछ मिल सका है। जीसस **जब जिन्दा थे तो उनके आसपास के लोगों ने कहा कि यह आवारा है। जब जीसस जिन्दा थे तो लोगों ने कहा यह बदमाश है। जब जीसस जिन्दा थे तो लोगों ने कहा यह लोगों को बरबाद कर देगा, लोगों को बिगाड़ देगा। और जब जीसस मर गए तो वो कहते हैं वह तो भगवान का इकलौता पुत्र था। वे ही लोग,—वे ही लोग कह रहे हैं कि वह भगवान का इकलौता पुत्र था।** और जीसस को अगर पता चल जाय—और मैंने एक कहानी सुनी है कि जीसस एक बार इस धोखे में आ चुके हैं। मैंने सुना है, १८ सौ वर्ष बाद जीसस को स्वर्ग में ख्याल आया कि जब मैं पहली दफा गया था दुनिया में, तब तो मेरे मानने वाले कोई नहीं थे, मैं अकेला गया था, लोग मुझे समझ नहीं पाये। अब १८ सौ वर्ष बाद आधी दुनिया ईसाई हो गई है। अब मैं जाऊँगा तो मेरा ठीक से स्वागत होगा। अब लोग मेरी बात समझ सकेंगे। मैंने सुना है कि १८ सौ वर्ष बाद एक दिन सुबह रविवार के दिन जीसस जेरूशलम में उतरे। लोग चर्च से बाहर निकल रहे थे—रविवार का दिन था, धार्मिक लोग चर्च गए हुए थे। वे लोग बाहर निकल रहे थे। जीसस एक वृक्ष के नीचे खड़े होकर उनकी प्रतीक्षा करने लगे कि वे तो जरूर मुझे पहचान जायेंगे। लोगों ने उन्हें देखा हंसने लगे। उन्होंने कहा बड़ा बहुरुपिया मालूम पड़ता है यह आदमी। यह आदमी बिल्कुल जीसस बना हुआ खड़ा है। वे लोग पास आए तो, जीसस ने कहा—दोस्तो। तुम शायद समझे नहीं। मैं क्राइस्ट हूं, वही जो १८ सौ वर्ष पहले आया था। वे लोग हंसने लगे, कोई उनका कपड़ा खींचने लगा, कोई पत्थर फेंकने लगा और उनसे कहा कि भाग जाओ यहाँ से, हमारा बड़ा पादरी आ रहा है। अगर उसने देख लिया तो मुसीबत में पड़ जाओगे। क्योंकि हमारे आर्च प्रीस्ट का यह कहना है कि जीसस सिर्फ एक बार हुआ, अब नहीं हो सकता। जीसस ने कहा कि पागलो! तुम मेरी प्रार्थनाएँ करके लौट रहे हो, तुम चर्च में मेरा आदर-सम्मान और मेरे चरणों में सिर रखकर लौट रहे हो, तुम मुझे पहचाने नहीं? उन लोगों ने कहा, हम भली भांति पहचान गये, तुम भाग जाओ नहीं तो मुश्किल में पड़ जाओगे। जीसस अब दुबारा आने वाले नहीं हैं वे एक बार आ चुके। तभी वह पादरी आ गया जो जीसस का सोने का क्रॉस लटकाए हुए था अपनी छाती पर। सोने की सूली! बड़े मजे की बात है! जीसस को जो सूली लगी थी वह लकड़ी की सूली थी और पादरी सोने की सूली लटकाए हुए है। सोने की कहीं सूलियां हुई हैं? और सोने की सूलियों पर कोई किसी को लटकाता है? उस पादरी को देखकर लोगों ने रास्ता छोड़ दिया। **जीसस पर पत्थर फेंक रहे थे, पादरी को देखकर रास्ता छोड़ दिया। आदमी बड़े अजीब हैं।** महावीर को देखकर हंसेंगे कि नंगा आदमी कहां चला जा रहा है उनके पिछलग्गू कोई बने हुए चले

जा रहे हों उनको कहेंगे मुनि महाराज ! महावीर को देखकर जरूर हंसे हैं लोग, आप हैरान होंगे जानकर–आज हिन्दी में एक गाली चलती है 'नंगा-लुच्चा' आपको शायद पता न हो, यह गाली सबसे पहले महावीर को दी गई थी क्योंकि वो नंगे रहते थे और बाल नोचते थे। सबसे पहले 'नंगा लुच्चा' इस मुल्क में आदमियों ने महावीर को कहा था, और आज हम उनको तीर्थंकर कह रहे हैं। पादरी को रास्ता छोड़ दिया उन लोगों ने और वे भीतर आये और पादरी ने कहा यह कौन बदमाश है ! पकड़ो इसे। जीसस ने कहा, तुम मुझे नहीं पहचाने ? तुम तो दिन रात मेरा ही गुण-गान करते हो। यह मेरी सूली लटकाये हुये तुम भी मुझे नहीं पहचानते ? उसने कहा मैंने पहचान लिया, अब जीसस दुबारा आने को नहीं हैं। वह एक बार आ चुके। अब उनका संदेश हमारे हाथ में है। हम उसे लोगों तक पहुंचाते हैं, अब उनके आने की जरूरत नहीं है। **पंडित हमेशा यही कहते हैं, कि संतों को कोई जरूरत नहीं है। वो तो हो चुके। अब हम उनका काम कर देते हैं।** क्योंकि अब हम उनका काम पूरा कर देते हैं, उनकी अब कोई जरूरत नहीं है। जीसस को पकड़कर चर्च के भीतर ले जाया गया। जीसस तो बहुत हैरान हुये कि फिर वही व्यवहार हो रहा है, जो दो हजार वर्ष पहले हुआ था। उनको एक कोठरी में बंद कर दिया गया। वह बड़े सोच में पड़ गये कि क्या दुबारा सूली लगेगी, अपने ही लोगों के हाथ से। आधी रात गये दरवाजा खुला, वह पादरी भीतर आया। उसने जीसस के चरणों पर सिर रख दिया, और कहा कि महाराज हम आपको भली भांति पहचान गये लेकिन अब आपके दुबारा आने की कोई भी जरूरत नहीं है। हम आपकी जगह काफी हैं। काम धन्धा बिलकुल अच्छा चल रहा है। कोई आपकी जरूरत नहीं है। Yau are the old disturber तुम वह पुराने ही शरारती हो। तुम जब भी आओगे, गड़बड़ कर दोगे। हम किसी तरह दुकान जमाते हैं, तुम आते हो सब गड़बड़ कर देते हो। १८ सौ साल में बड़ी मुश्किल से हम दुकान जमा पाये। सब तरफ राज्य फैल गया है। सब काम बिल्कुल मजे से चल रहा है। आपकी अब कोई आवश्यकता नहीं है, आप परमात्मा के सिंहासन के पास मौजूद रहिये, वहीं स्वर्ग में। जीसस ने कहा तुम मुझे पहचान गये ? फिर भी सुबह तुमने मुझे पहचाना नहीं ? उसने कहा— **'हम आपको बाजार में कभी भी नहीं पहचान सकते। और न हम जिंदा हालत में आपको पहचान सकते हैं। हम हमेशा मरे हुये पैगम्बरों को पहचानते हैं"** और बाजार में हम कभी नहीं पहचान सकते, अकेले में हम पहचान लेते हैं। महावीर के साथ भी यही होगा, बुद्ध के साथ भी यही होगा, तारण के साथ भी यही होगा। क्योंकि हम वही लोग हैं जो उस दिन थे। जो जमीन पर हमेशा रहे हैं। और हमने यही किया। लेकिन हम बड़े तृप्त होते हैं समारोह मनाकर, जयंतियां मनाकर, सोचते हैं हम बड़ा धार्मिक काम कर रहे हैं। नहीं, कोई समारोह धार्मिक नहीं हो सकता। भीड़ भाड़ से धर्म का कोई संबंध नहीं है। और कोई भाषण, प्रवचन, करना या सुनना धार्मिक नहीं हो सकता। सुनने और पढ़ने और सोचने से उसका कोई संबंध नहीं है। धर्म की यात्रा अकेले की यात्रा है, भीड़ भाड़ से दूर हट जाने की यात्रा है। धर्म की यात्रा का मतलब है मैं उसे खोजूं जो मैं अपनी अत्यन्त तनहाई में, अपने अकेलेपन में, अपनी लोनलीनेस में हूं। वह जो मैं बिलकुल अकेले में हूं. वह क्या हूं मैं ? वहां जाऊं उस जीवन की ज्योति की खोज करूं। कैसे होगी वह खोज ? क्या है रास्ता उसका ? क्या करें हम ? किन मंदिरों में जायें, किन तीर्थों में जायें ? कहाँ खोजें उसे ?

शायद आपने सुना हो, मैंने एक मजाक सुना। मैंने सुना है कि परमात्मा ने जब दुनिया बनाई। जब तक आदमी नहीं बना था तब तक वह चीजें बनाता चला गया। फिर उसने आदमी बनाया और आदमी के बाद तो आपको पता होगा कि फिर उसने कुछ नहीं बनाया। क्योंकि आदमी को देखकर वह एकदम घबरा गया। और आदमी को बनाने के बाद उसने बनाने का काम ही बंद कर दिया। क्योंकि बनाना बहुत खतरनाक सिद्ध हुआ था। ये आदमी बन गया था यह इतना खतरनाक था

जिसका कोई हिसाब न था। और यह आदमी पैदा ही जैसे हुआ, उसने खोज शुरू कर दी, यह क्या है ? वह क्या है ? ईश्वर घबराया, उसने देवताओं से पूछा आज नहीं कल, यह मुझे भी मुसीबत में डालेगा। यह मुझे भी पकड़कर किसी प्रयोगशाला में, किसी लेबोरेटरी में, किसी टेस्ट–ट्यूब में डालकर जाँच परख करेगा कि भगवान क्या है ? तो मैं इससे बचने के लिये क्या करूँ ? देवताओं ने बहुत सुझाव दिये, किसी ने कहा जाओ हिमालय पर छिप जाओ। भगवान ने कहा तुम्हें पता नहीं, मैं सारा भविष्य जानता हूं। एक तेनसिंह होगा, एक हिलेरी होगा वह जाकर गौरी–शंकर पर चढ़ जायेंगे। वह मेरा पता लगा लेंगे। उन्होंने कहा तुम पैसिफिक महासागर की पाँच मील गहराई है उसमें छुप जाओ। भगवान ने कहा इससे काम नहीं चलेगा, आदमी चाँदतारों पर पहुंच जायेगा पैसिफिक की गहराई क्या करेगी। तब एक बूढ़े देवता ने कहा तब एक ही रास्ता है कि तुम आदमी के भीतर छिप जाओ। आदमी को कभी पता नहीं चलेगा कि तुम उसके भीतर छिपे हो, और मैंने सुना है कि भगवान ने वह बात मान ली और वे आदमी के भीतर छुप गये। और आदमी सब जगह खोजता है, एक जगह छोड़ देता है खोजना। उसी जगह जहाँ वह स्वयं है। सब जगह हम खोजते फिरते हैं। हमारी आँखें कितनी दूर–दूर तक की यात्रा करती हैं, हमारे हाथ किस–किस को पकड़ते हैं और गले लगाते हैं। हमारे कान कहां–कहां तक खुले होते हैं लेकिन एक जगह छोड़ देते हैं जहाँ हमारी खोज नहीं हो पाती है। वहां हम कैसे पहुंच सकते हैं ? वहाँ का एक ही रास्ता है और वह रास्ता निगेटिव है, नकारात्मक है। वहां का रास्ता यह है कि अगर हम सब जगह खोजना बन्द कर दें तो वहां पहुंच जायेंगे जहां हम हैं। जब तक हम कहीं और खोज रहे हैं तब तक हम उसे नहीं पा सकेंगे जो हम हैं। जब हम सारी खोज छोड़ देंगे और कहीं भी नहीं खोजेंगे और बिना खोज के खड़े रह जायेंगे तब हम वहां पहुंच जायेंगे जहां कि हमारा होना है। जब तक आदमी खोजता है तब तक कभी सत्य नहीं खोज पाता है। जब आदमी सभी खोज छोड़कर चुपचाप पड़ा रह जाता है, एक क्षण को भी अगर सारी खोज बन्द हो जाय, सभी 'सीकिंग' बन्द हो जाय तो हम वहां पहुंच जाते हैं जहां हम हैं। जरूरी है यह बात, अगर मुझे किसी दूसरे के पास पहुंचना है। तो यात्रा करनी पड़ेगी क्योंकि दूसरा मुझसे दूर है। और अगर मुझे अपने पास पहुंचना है तो मुझे कैसे यात्रा करनी पड़ेगी ? यात्रा दूर को पाने के लिए करनी पड़ती है। जो निकट है, जो मैं ही हूं उसे पाने के लिए कोई यात्रा कैसे हो सकती है। यात्रा का मतलब होता है फासला होना चाहिए, डिस्टेन्स होना चाहिए। मेरे और आपके बीच फासला है। मैं आप तक चलके आ सकता हूं। लेकिन 'मेरे' और 'मेरे' बीच कौन सा फासला है, जिससे मैं चल के पहुंच जाऊं, तो जब तक मैं चलता रहूंगा, तब तक मैं और कहीं पहुंच जाऊं अपने तक ही नहीं पहुंच सकता हूं। जिस दिन मैं सारा चलना छोड़ दूंगा, उस दिन मैं वहां पहुंच जाऊंगा, जहां मैं हूं, जहां मैं सदा से हूं, जहां मैं सदा से था, और जहाँ से मैं एक क्षण को भी कभी न हटा था, हूं, न हट सकता हूं। हटने का जहाँ से कोई उपाय नहीं। बुद्ध एक जंगल से निकलते थे। गांव के बाहर गए तो गांव के लोगों ने कहा : इस रास्ते से मत जायें। वहां एक अंगुलीमाल नाम का आदमी बिल्कुल पागल हो गया है। वह जिसे भी देखता है उसी की गर्दन काटकर उंगलियों की माला बना लेता है। उस रास्ते पर कोई भी नहीं जाता है। आप उस रास्ते पर मत जायें। लेकिन बुद्ध हंसने लगे। बुद्ध ने कहा अगर मुझे अब भी यह ख्याल हो कि मैं मारा जा सकता हूं। तो फिर वह आदमी पागल नहीं मैं पागल हूं। मैं वह हूं जिसे मारे जाने और मरने का कोई उपाय नहीं है। इसलिए मेरे पास सब रास्ते सम न हैं। बुद्ध उस रास्ते से गए। उनके पीछे जो साधू–सन्यासी थे, जो हमेशा भीड़ भाड़ में, बाजार में और राजधानी में उनके आस–पास चलते थे वो धीरे–धीरे पीछे हटने लगे। अनुयायियों का कभी भी कोई भरोसा नहीं। क्योंकि उन्होंने देखा कि वहां खतरा है, खतरनाक है जब राजधानी आती थी तो साथ में चलने वाले भिक्षु आगे चलने लगते थे। आज बुद्ध बिल्कुल अकेले रह गए, भिक्षु पीछे छूट गए। वे भी चल रहे हैं पीछे डरते हुए, खतरा कभी भी है और पास कोएक

चट्टान पर, वह आदमी फर्शे पर धार रख रहा है। बुद्ध को देखते से ही वह चिल्लाया कि नासमझ, शायद तुझे पता नहीं है कि मैं अंगुलीमाल हूं। जो भी आदमी यहाँ आएगा मैं उसकी गर्दन काटूँगा। लेकिन तू भिक्षु है, भोला-भाला मालूम पड़ता है, सन्यासी है, मैं तुझे अमर कर सकता हूं अगर तू वहीं से लौट जाय, जहाँ तक तू आ गया है आगे मत बढ़। अब एक कदम भी आगे मत चल। बुद्ध कहने लगे शायद अंगुलीमाल तुझे पता नहीं कि मैंने चलना बहुत दिनों पहले बन्द कर दिया था। मैं चलता ही नहीं। और बुद्ध उसकी तरफ चलते ही गए। कहने लगे मैं चलता ही नहीं। वह अंगुलीमाल कहने लगा कि मैं तो सोचता था कि मैं पागल हूं। लेकिन पागल तुम मालूम पड़ते हो। चल रहे हो और कहते हो चलता नहीं, बुद्ध ने कहा कि मैं और और भी तुझसे कहता हूं कि मैं तो चलता नहीं और तू चल रहा है। और अंगुलीमाल तो खड़ा था। बुद्ध उसके पास पहुंच गये। अंगुलीमाल ने कहा कि इसके पहले कि मैं तुम्हारी गर्दन काटूँ जरा इस इस रहस्य को मुझे समझा दो कि चलते हुए को तुम कहते हो कि नहीं चलता है और मुझ खड़े हुए को कहते हो कि मैं चलता हूं। बुद्ध कहने लगे अंगुलीमाल, जिस दिन मन का चलना बन्द हो गया उसी दिन सब चलना बन्द हो गया। अब मेरे भीतर जो है, वह जरा भी नहीं चलता। और अब जब मन का चलना बन्द हुआ, तब जाना कि वह पहले भी कभी चला नहीं था, वह भ्रम था कि में सोचता था कि मैं चलता हूं। तू खड़ा हुआ दिखाई पड़ता है लेकिन तेरा मन जोर से चल रहा है। तू सोच रहा है इस भिक्षु को मार डालूँ या न मार डालूँ। तेरा मन जोर से चल रहा है। लेकिन मैं आ गया तू मुझे मार डाल, अगर तुझे उससे आनंद मिलता हो तो मुझे खुशी होगी। लेकिन मुझे मारने के पहले एक छोटा सा काम कर दे। एक मरते हुए आदमी की इच्छा पूरी कर सकेगा? अंगुलीमाल ने कहा, बोलो क्या चाहते हो? बुद्ध ने कहा इस वृक्ष की चार-छह पत्तियां मुझे तोड़ के दे दें। उसने फर्शे को उठा के पूरी शाख काट डाली, बुद्ध ने कहा आधा काम तूने कर दिया, धन्यवाद! आधा और कर दे, इस शाखा को वापस जोड़ दे। अंगुलीमाल कहने लगा—तुम निपट पागल ही निकले। शाखा तोड़ी जा सकती है, जोड़ी कैसे जा सकती है? बुद्ध ने कहा—तो पागल! तोड़ना तो बच्चे भी कर सकते हैं, उसमें कोई खास बात न थी। मैं तो सोचता था तू बड़ा बहादुर आदमी है, जोड़ नहीं सकता। तोड़ना तो नपुंसक और कायर भी कर सकते हैं। अगर तू जोड़े तो मैं समझूँ कि तू कुछ है। और अंगुलीमाल से बुद्ध ने कहा कि अब तू मेरी गर्दन को काट ले, लेकिन एक बात ख्याल रखना: **मारना नपुंसक और कायर का काम है, जीवन देना बहादुर का काम है।** क्योंकि तू मारता है, जोड़ नहीं सकता, जीवन दे नहीं सकता। तूने एकाध गर्दन जोड़ी? उस अंगुलीमाल ने फर्शा नीचे पटक दिया और बुद्ध के चरणों पर गिर पड़ा। उसने कहा मैं तो सोचता था तोड़ने में बहादुरी है, मुझे पहली बार ख्याल आया कि बहादुरी जोड़ने में है। लेकिन जोड़ना कैसे हो सकता है? तो बुद्ध ने कहा जोड़ वही सकता है जीवन को, जो अपने जीवन से जुड़ गया हो। जोड़ वही सकता है जीवन को जो उसको जान ले जो अचल है, जो कभी नहीं चला। उसे जान ले तो फिर उसे पता चलता है कि तोड़ना तो कल्पना है, सपना है, झूठा है। मौत तो असत्य है। मृत्यु से बड़ा कोई असत्य नहीं है। क्योंकि तब उसे ज्ञात होता है कि जो है वह सदा से है, सदा से था, और सदा रहेगा। लेकिन बुद्ध कहने लगे कि जिसका चलना बन्द हो जाय। धर्म की विधि अगर एक शब्द में कही जा सके **तो वह है चलना बन्द हो जाना। उसे कुछ लोग सामायिक कहते हैं, चलना बन्द हो जाने को; कुछ लोग ध्यान कहते हैं; चलना बन्द होजाने को; कुछ लोग योग कहते हैं, चलना बन्द हो जाने को,** वह जो हमारा मन चल रहा है, २४ घन्टे चल रहा है, जागते में चल रहा है, सोते में चल रहा है, वह चलता चला जा रहा है, उस चलते हुए मन के कारण हम उसे नहीं जान पाते जो अचल है।

एक गाड़ी का चाक चल रहा है। कभी आपने ख्याल किया कि गाड़ी के चाक के पूरे समय चलते रहने पर भी गाड़ी की कील बिना चले हुए खड़ी रहती है। वह भीतर अचल, रुकी हुई रहती है। और कभी आपने यह ख्याल

किया कि चाक इसीलिए चल सकता है कि कील चलती नहीं। अगर कील भी चलने लगे तो चाक उसी क्षण गिर जायेगा, चल नहीं सकेगा। चाक चलता है, क्योंकि कील नहीं चलती, इसका मतलब आप समझे ? इसका मतलब है कि सारा चलना उस पर ठहरा हुआ है जो स्वयं नहीं चलता है। सारी गति उस पर रुकी हुई है जो अगति है। सारा खेल, सारा परिवर्तन, सारा मूवमेन्ट उस पर चल रहा है जो इम्मूवेबल है। जो कभी नहीं चलता, कभी नहीं घूमता, सदा स्थिर है। उस सदा स्थिर का, उस सदा नित्य का नाम ही आत्मा है। लेकिन हम गाड़ी के चाक पर ही घूम रहे हैं। हमारा मन गाड़ी के स्पोक और हड्डों के साथ घूम रहा है। उसका हमें कोई पता नहीं चलता जो गाड़ी की कील है—जो मेरा मैं है। वह हमें कैसे पता चलेगा ? यह चलना बन्द हो तो वह हमें इसी क्षण पता चल सकता है। और वह चलना बन्द हो सकता है। इस चलने के बन्द हो जाने का अनुभव ही धर्म का अनुभव है। **दो तरह के अनुभव हैं मनुष्य के—चलते हुए मन का अनुभव, उस अनुभव का नाम संसार है; रुके हुए, ठहरे हुए मन का अनुभव, उस अनुभव का नाम धर्म है।** इसलिए धर्म का कोई संगठन नहीं है। धर्म की साधना होती है संगठन नहीं। धर्म की कोई संगठना नहीं है। धर्म की साधना है। साधना वैयक्तिक है और संगठन सब सामूहिक है, संगठन भीड़ है। कैसे उतरेंगे इस अपने अकेले में ? कभी आंख बन्द की है ? कभी कान बन्द किए हैं ? कभी हाथ छोड़ दिए हैं खाली ? कभी मन को छोड़ दिया है चुप, मौन ? नहीं, एक क्षण को नहीं छोड़ा। कभी आंख तो बन्द करते हैं लेकिन फिर भी भीतर आंख देखे चली जाती है। आंख बन्द करते हैं फिर भीतर सपने दिखाई पड़ने लगते हैं। ऊपर से कोने में बन्द हो जाते हैं, बैठ जाते हैं लेकिन मन भागता रहता है, भागता रहता है, दूर-दूर भागता रहता है।

एक आदमी मरण-शय्या पर पड़ा था। मरने के करीब है, कोई उम्मीद नहीं है बचने की, सांझ हो गई है, दिया घर का जला नहीं है, घर में कोई मरता है, दिया कैसे जले। अंधेरे में उसने आंखें खोली हैं और अपनी पत्नी को पूछने लगा कि मेरा बड़ा बेटा कहां है ? उसकी पत्नी ने कहा—आप निश्चिन्त रहें, वह बेटा आप के पैर के पास बैठा है और वह पत्नी बहुत खुशी से भर गई क्योंकि यह पहला मौका था जीवन में कि उसने इतने प्रेम से अपने बेटे को पूछा था। वह हमेशा पूछता था तिजोरी की चाबी कहां है ? खाते बही कहां रखे हैं ? और सब बातें पूछता था लेकिन यह कभी नहीं पूछा था कि बेटा कहां है। उसने प्रेम के लिए कभी चिन्ता ही न की थी। जो पैसे की ही चिंता करते रहते हैं वो बेटे की चिन्ता कर कैसे सकते हैं। दो में से एक ही चिन्ता हो सकती है। जो प्रेम के लिए पूछता है वह पैसे को पूछने के लिए बहुत अवसर नहीं पाता। जो पैसे को ही पूछता रहता है, उसके प्रेम की दिशा में द्वार ही नहीं खुलते। उसकी पत्नी बहुत खुश हुई, उसने कहा बेटा आपके पैर के पास है। उस आदमी ने पूछा—और उससे छोटा बेटा ? वह भी मौजूद था। उससे छोटा ? वह भी मौजूद था। चौथा ? वह भी मौजूद था। वह उठके पूछने लगा—और पांचवां बेटा ? उसकी पत्नी ने कहा—आप निश्चिन्त लेटे रहें, हम सब यहीं मौजूद हैं। पांचवां भी आपकी बगल में बैठा है। उस आदमी ने हाथ टेक कर कहा : इसका क्या मतलब ? फिर दूकान पर कौन बैठा हुआ है ? वह पत्नी भूल में थी। वह सोचती थी शायद अपने बेटों को यह प्रेम के कारण पूछ रहा है। वह पता लगा रहा था कि दूकान खुली है या बन्द है ? यह आदमी मर रहा है लेकिन इसका मन वहां नहीं है, इसका मन दूकान पर है। मरता हुआ आदमी भी अपने पास नहीं आता। मौत को सामने देख कर भी ! उसका मन स्थिर नहीं होता। उसका मन दूकान पर डोलता है। मृत्यु के क्षण में भी यह ख्याल नहीं आता कि यह क्या हो गया, जीवन हाथ से गया, यह जीवन क्या था ? यह मैं विदा होने के करीब आ गया और मेरा भवन अंधकार में ही रहा। नहीं, अभी वह पूछता है दूकान। दूकान खुली है या बन्द ? हमारा मन भाग रहा है, भाग रहा है, २४ घण्टे जन्म से लेकर मृत्यु तक। इस भागते हुए मन को लेकर पढ़ो गीता, पढ़ो समयसार, पढ़ो कुन्द-कुन्द को।

यह मन का भागना छोड़ देना पड़ेगा। यह छोड़ा

जा सकता है, इस छोड़ने का छोटा सा सूत्र और फिर मैं अपनी बात पूरी कर दूंगा। यह छूट सकता है, यह मन का चलना एक बहुत छोटे से सूत्र से छूट सकता है। लेकिन शायद कभी उस पर आपने प्रयोग नहीं किया होगा। एक बहुत छोटा सा सूत्र, और यह मत सोचना आप कि चूँकि सूत्र छोटा है इसलिए इतना भागता हुआ मन कैसे रुक जायगा। अणु बड़ा छोटा सा होता है लेकिन उसका विस्फोट सारी पृथ्वी को डुबा सकता है। एक बीज छोटा सा होता है लेकिन जब वह बड़ा हो जाता है तो इतना बड़ा वृक्ष बन जाता है कि हजार आदमी उसकी छाया में बैठ सकते हैं। एक छोटा सा बच्चा माँ के पेट में आता है, जरा सा होता है। फिर उसके भीतर से गांधी पैदा हो सकते हैं। उसके भीतर से राम, कृष्ण पैदा हो सकते हैं, उसके भीतर से आइंस्टीन पैदा हो सकते हैं। एक छोटा सा बीज और एक विराट मनुष्य को पैदा कर सकता है। एक छोटा सा सूत्र और सारे व्यक्तित्व को बदल सकता है। लेकिन हमने अब तक उस छोटे से सूत्र पर कोई भी प्रयोग नहीं किया जहां सारा मन शान्त हो जाय, मौन हो जाय और एक द्वार खुल जाये जहां हम जान सकें उसे जो मैं हूं। वह एक छोटा सा सूत्र है : एक जिज्ञासा का सूत्र, एक इन्क्वेरी। कभी एकान्त में २४ घण्टे की दौड़ में एक घण्टे को बैठ जायें और अपने से एक ही प्रश्न पूछें कि 'मैं कौन हूं ?' मैं हूं कौन। 'मैं कौन हूं ?' 'मैं कौन हूं ?' यह पूछते चले जाये। एक घण्टे २४ घण्टे में। आप कहेंगे इस पूछने से क्या होगा, हम को पता है कि मैं आत्मा हूं। आपको ज़रा भी पता नहीं है कि मैं आत्मा हूं। अगर यही पता होता तो फिर तो और कुछ पता करने को बाकी न होता। आप कहेंगे मुझे पता है कि मैं **अशोक जैन हूं या मोहनचन्द जैन हूं** या फलां-ढिका कोई हूं। लेकिन कोई नाम आप जन्म के साथ लेकर पैदा नहीं हुए और मरते वक्त कोई नाम आपके साथ नहीं होगा। नाम झूठ हैं, नाम जोड़े गए हैं, काम चलाऊ, बाज़ार में काम दे देते हैं, वहां भीतर काम नहीं देते। लेकिन हमने सूत्र याद कर रखे हैं कि मैं तो शुद्ध बुद्ध आत्मा हूं, मैं तो परमात्मा हूं, मैं तो ब्रह्मस्वरूप हूं। ये सूत्र हमें जिज्ञासा नहीं करने देते। हमें पहले से ही पता है। इसलिए हम पूछ ही नहीं पाते। नहीं, मैं आपसे कह रहा हूं यह सूत्र काम करेगा अगर आप कोई उत्तर न देंगे सिर्फ पूछेंगे तब यह सूत्र काम करेगा। पूछें अपने से कि मैं कौन हूं और पूछते ही चले जायें। इतनी ताकत से पूछें कि भीतर के प्राणों की सारी शक्ति संलग्न हो जाय। इतनी शक्ति से पूछें कि मन का कोई कोना इस गूंज से बाकी न रह जाय, इतने प्राणपण से पूछें कि पूरे भीतर के व्यक्तित्व में एक ही आवाज गूंजने लगे कि मैं कौन हूं, एक-एक कण शरीर का पूछने लगे कि मैं कौन हूं, स्वांस-स्वांस पूछने लगे कि मैं कौन हूं। हृदय की धड़कन-धड़कन पूछने लगे कि मैं कौन हूं। एक घण्टे में सारा शरीर पसीना-पसीना हो जाय, सारा शरीर कँपने लगे और पूछने लगे कि 'मैं कौन हूं ?' और आप हैरान हो जायेंगे। जितनी तीव्रता से यह जिज्ञासा होगी कि मैं कौन हूं उतनी ही मन की गति और चचलता क्षीण होने लगेगी। जितनी तीव्रता से यह उत्सुकता होगी और आकांक्षा होगी कि मैं कौन हूं, उतनी ही मन की वह जो भाग दौड़ है, विलीन होने लगेगी। जितनी गहराई में यह प्रश्न भीतर घुसेगा तीर की तरह, उतना ही किसी दिन अचानक आप पायेंगे कि मन की गति बन्द हो गई है, एक प्रश्न मात्र रह गया है कि मैं कौन हूं। और एक दिन आप पायेंगे कि वह प्रश्न भी जा चुका है। सिर्फ 'आप' ही रह गए हैं। और जिस दिन न मन का कोई विचार होगा, और न प्रश्न रह जायगा, उस दिन जिसे आप जान लेंगे वह है धर्म, वह है सत्य, वह है परमात्मा। लेकिन हम तो सब उत्तर तैयार किये हुए बैठे हैं।

एक फकीर एक गांव में गया था। उस गांव के लोग उस फकीर से कहने लगे कि आज मस्जिद में चलो और हमें भगवान के सम्बन्ध में कुछ समझाओ। उस फकीर ने कहा भगवान के सम्बन्ध में कभी किसी ने कुछ समझाया है जो मैं समझा सकूंगा। लेकिन वे लोग नहीं माने और उस फकीर को पकड़ कर ले गए। वह मस्जिद में जाकर मंच के ऊपर खड़ा हो गया। सारा गांव इकट्ठा था। उस गांव के लोगों से वह पूछने लगा तुम चाहते हो कि मैं बताऊँ कि भगवान क्या है तो उसके

पहले मै तुमसे पूछ लूँ–तुम्हें पता है कि भगवान है ? तुम मानते हो—भगवान है ? वे सारे लोग कहने लगे हम मानते हैं, हमें पता है कि भगवान है। उस फकीर ने कहा बात खतम, जब तुम्हें पता ही है तो अब मुझे बताने की कोई जरूरत नहीं रह गई है। क्योंकि जिसको यह भी पता हो कि ईश्वर है उसे जानने को कुछ भी शेष नहीं रह गया। और आगे और जानने को क्या है। अब मेरा समय खराब मत करो, अपना समय खराब मत करवाओ। वह फकीर उतर कर मंच से नीचे चला गया। गांव के लोग बड़े हैरान हुए। उन्होंने कहा यह तो गलती हो गई, लेकिन उसे छोड़ेंगे नहीं। फिर दूसरे दिन उसके पास पहुंच गए कि चलिए। उसने कहा कि मैं कल गया था, बोलो। वे कहने लगे, हम दूसरे लोग हैं। धार्मिक आदमी का कोई भरोसा नहीं। जरा में बदल सकते हैं। वे कहने लगे, हम तो, दूसरे लोग हैं, वे दूसरे लोग रहे होंगे। आप चलिए हमें भगवान के बाबत् समझाइए। वह फकीर फिर पहुंच गया। वह मंच पर खड़ा हुआ और उसने कहा कि तुम्हें पता है कि भगवान है। तुम मानते हो, जानते हो ? गांव के लोगों ने दूसरा उत्तर तैयार कर रखा था। उन्होंने सोचा, जब पहला उत्तर काम नहीं किया, तो दूसरा कर जायगा। उन्होंने कहा, न हम मानते, न हम जानते, कि भगवान है, कहां का भगवान ? कैसा भगवान ? अब बोलिए, अब समझाइए। वह फकीर कहने लगा जब तुम जानते ही नहीं कि भगवान है, जब तुम जानते ही नहीं कि भगवान है तब सवाल ही खतम। उसके संबध में बात करने की जरूरत है ही क्या, जो है ही नहीं, जिसका पता ही नहीं है। मैं चला। मैं बेकार सिर नहीं फोड़ूंगा। गांव के लोगों ने कहा यह तो बड़ी मुसीबत हो गई, यह आदमी तो बड़ा गड़बड़ है। फकीर हमेशा से गड़बड़ रहे हैं। उन्होंने कहा कल फिर कोई उपाय खोजना पड़ेगा। उन्होंने तीसरा उपाय खोज लिया। तीन ही उपाय आदमी के पास होते हैं—एक हां, एक ना, और फिर दोनों का जोड़ समझौता : एक हिन्दू, एक मुसलमान—फिर हिन्दू–मुस्लिम भाई, भाई। यह ठीक, वह ठीक अगर दोनों नहीं तो दोनों ठीक। उन्होंने कहा ऐसा करो, उपाय कर लें तीसरा। फकीर को फिर समझाकर लिवा लाए। वह खड़ा हुआ। पूछा उसने–ईश्वर है ? आधी मस्जिद के लोगों ने हाथ उठाया, उन्होंने कहा आधे लोग मानते हैं कि है, और आधे लोगों ने कहा हम नहीं मानते कि है अब आप बोलिए। उस फकीर ने कहा बात खतम, जो जानते हैं, वे उनको समझा दें जो नहीं जानते हैं, मेरी यहां क्या जरूरत ? तुम बड़े पागल हो। जब तुम्हारे बीच आधे लोग जानते हैं और आधे नहीं जानते तो तुम्हें निपटारा कर लेना था। तुम मुझे किस लिए लाए ? वह फकीर मुझे मिला तो मैंने उससे पूछा उस गांव के लोग चौथी बार आये या नहीं ? वह फकीर कहने लगा वे नहीं आए। अगर वे आते मुझे बोलना पड़ता। मैंने कहा क्यों ? वह कहने लगा चौथा एक ही उत्तर हो सकता था मैं पूछता ईश्वर के सम्बन्ध में और वे चुप रह जाते, कोई भी उत्तर न देते। तो फिर मुझे बोलना पड़ता। अगर वे मौन रह जाते, कोई उत्तर न देते तो मुझे बोलना पड़ता। मैं आपसे कहता हू जब तक आप अपने मन से उत्तर दिए चले जायेंगे कि मैं आत्मा हूं, मैं परमात्मा हूं, मैं ब्रह्म हूं, अहं ब्रह्मास्मि, जब तक इन उधार शब्दों को आप दुहराते रहेंगे तब तक वह आत्मा भीतर से उत्तर नहीं देगी कि मैं कौन हूं। मन के सारे उत्तर जब आप छोड़ देंगे और सिर्फ पूछेंगे कि मैं कौन हूं, में कौन हूं, मैं कौन हूं तब उत्तर आएगा जो आत्मा का उत्तर है। परमात्मा से उत्तर आते हैं लेकिन तभी जब हम उत्तर देना बन्द कर देते हैं।

कृष्ण एक दिन भोजन करने बैठे। रुक्मणी उनकी थाली पर पंखा झलती है। कोई दो ही कौर उन्होंने खाये होंगे कि एकदम उठे हैं और दरवाजे की तरफ भागे हैं। रुक्मणी ने कहा यह क्या करते हैं ? कहाँ जाते हैं ? लेकिन उन्हें उत्तर देने की भी फुरसत नहीं। द्वार पर गए, ठिठके एक क्षण, फिर वापिस लौटकर अपनी थाली पर बैठके भोजन करने लगे। उस रुक्मणी ने कहा—आपने तो मुझे और भी रहस्य में डाल दिया। इतनी तेजी से भागे, ऐसी कौन सी जल्दी, कौन सी जरूरत आ गई थी कि उत्तर भी मुझे नहीं दिए। फिर द्वार से लौट

भी आए । कृष्ण ने कहा जरूरत बहुत तेजी से आ गई थी । उत्तर देने की फुरसत न थी । एक राजधानी में मेरा एक फकीर, मुझे एक प्रेम करने वाला पागल, चल रहा था, बच्चे व लोग उसके सिर पर पत्थर मार रहे थे । उसके सिर से खून बह रहा है और वह प्रेम से भरा हुआ है और कोई उत्तर नहीं दे रहा है उनको, तो मेरी जरूरत पड़ गई थी । **जब कोई इतना असहाय होता है तब मेरी जरूरत पड़ जाती है ।** तब रुक्मणी पूछने लगी आप द्वार से वापस क्यों लौट आए ? कृष्ण ने कहा मेरी जरूरत न रही । जब तक मैं द्वार पर गया, उसने भी हाथ में पत्थर उठा लिया है । अब वह खुद ही उत्तर दे रहा है । मेरी कौन सी जरूरत ?

मैं अन्त में आपसे यह कहना चाहता हूं कि जब तक आप उत्तर दिए चले जायेंगे तब तक परमात्मा का उत्तर उपलब्ध नहीं होगा । जिस दिन आप उत्तर नहीं देंगे, सिर्फ मौन प्रतीक्षा रह जायगी, ए साइलेण्ट अवेटिंग रह जायगी, सिर्फ एक मौन जिज्ञासा रह जायगी कि मैं हूं कौन ? और धीरे-धीरे शब्द भी खो जायेंगे, सिर्फ जिज्ञासा रह जायगी निःशब्द कि मैं हूं कौन ? यह भी आप पूछेंगे नहीं, यह प्रश्न भी गिर जायगा, सिर्फ प्राणों में एक आकांक्षा रह जायगी जानने की अनजानी, अपरिचित, निःशब्द में कौन हूं ? उस दिन उत्तर उपलब्ध हो जाता है, उस दिन आप वहां पहुंच जाते हैं जहां प्राणों का प्राण है, जहां आत्मा है, जहां प्रभु का वास है । उस मन्दिर में प्रवेश हो जाता है । वहां आप जानेंगे कि धर्म क्या है, वहां आप जानेंगे कि सत्य क्या है । और हम सब उस मन्दिर के बाहर ही बैठे हुए हैं । अपनी-अपनी किताबें खोले हुए, मन्दिर के बाहर ही बैठे हुए हैं और किताबें खोले विचार कर रहे हैं । यह विचार चलता रहेगा अनंत काल तक । बहुत जन्म हुए हैं, बहुत जन्म होंगे और उस मन्दिर में प्रवेश नहीं होगा । उस मन्दिर में तो अभी और यहीं प्रवेश हो सकता है । चाहिए एक तीव्र जिज्ञासा, एक इन्टेन्स इन्क्वैरी, इतनी तीव्र कि सारे प्राण उसमें समाहित, इकट्ठे हो जायें । इतनी तीव्र पुकार कि प्राणों की कोई शक्ति अछूती न रह जाय । जिस दिन भी कोई व्यक्ति अपने पूरे प्राणों से पूछता है कि मैं कौन हूं, उसी दिन, उसी क्षण उत्तर उपलब्ध हो जाता है । वही है उत्तर, किसी शास्त्र में कोई उत्तर नहीं है । **स्वयं में है उत्तर, लेकिन हमने पूछा नहीं इसलिए हम दूसरों के दरवाजों पर भटक रहे हैं, हाथ जोड़े हुए भीख मांग रहे हैं । नहीं, धर्म भीख मांगने से उपलब्ध नहीं होता । नहीं कोई तीर्थंकर, नहीं कोई अवतार किसी को धर्म दे सकता अन्यथा एक तीर्थंकर इतना प्रेमी होता है कि वह सब को धर्म बांट ही गया होता, कोई अधार्मिक बचता नहीं ।** नहीं कोई किसी को दे सकता, परमात्मा करे जगाये इतनी जिज्ञासा, भर दे प्राणों में इतनी प्यास, कि हम अपने भीतर की दीवाल को तोड़कर उस मन्दिर में प्रविष्ट हो जायें, जहां उसका वास है जिसे पा लेने के बाद फिर कुछ पाने को शेष नहीं रह जाता । परमात्मा करे जान लें हम उसे, जो मृत्यु के बीच अमृत है, परमात्मा करे पहचान लें हम उसे, जो घने से घने अंधेरे के बीच अनन्त आलोक है । वहां जो पहुंच जाता है, उसके प्राणों के भवन में फिर निरंतर वीणा बजने लगती है, वीणा जो हमने कभी नहीं सुनी । उसके भीतर फूल बरसने लगते हैं, फूल, जो हमने कभी नहीं देखे । उसके भीतर दिये जल जाते हैं, दिये, जिनसे हमारी आँखें अपरिचित हैं । मेरी इन बातों को इतनी शांति और इतने प्रेम से सुना, इसके लिए बहुत बहुत अनुग्रहीत हूं और अन्त में सब के भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें ।

★★

पत्र-प्रेरणा

[आचार्य श्री द्वारा श्री रोहितकुमार मित्तल को लिखा गया एक पत्र]

प्रिय आत्मन,

स्नेह । तुम्हारे पत्र को राह में पढ़ा, उसने मेरे हृदय को छू लिया है। जीवन सत्य को जानने की तुम्हारी आकांक्षा प्रबल हो तो जो अभी प्यास है वही एक दिन प्राप्ति बन जाती है । केवल एक जलती हुई अभीप्सा चाहिए। और कुछ भी आवश्यक नहीं है। नदियां जैसे सागर को खोज लेती हैं वैसे ही मनुष्य भी चाहना करे तो सत्य को पा लेता है। कोई पर्वत, कोई चोटियां बाधा नहीं बनती हैं वरन् उनकी चुनौती सुप्त पुरुषार्थ को जगा देती है।

सत्य प्रत्येक के भीतर है। नदियों को तो सागर खोजना पड़ता है। हमारा सागर तो हमारे भीतर है। और फिर भी जो उसके प्यासे और उससे वंचित रह जायें, उन पर सिवाय आश्चर्य के और क्या करना होगा ? वस्तुतः उन्होंने ठीक से चाहा ही न होगा।

ईसा का एक वचन है : मांगो और वह मिलेगा।

पर कोई मांगे ही नहीं तो कसूर किसका है ?

प्रभु को पाने से सस्ता सौदा और कुछ भी नहीं है। केवल उसे मांगना ही होता है। यद्यपि मांग जैसे-जैसे प्रबल होती है मांगने वाला वैसे ही वैसे विसर्जित होता जाता है। एक सीमा आती है, वाष्पीकरण का एक बिन्दु आता है, जहां मांगने वाला पूरी तरह मिट जाता है और केवल माँग ही शेष रह जाती है। यही बिन्दु प्राप्ति का बिन्दु भी है। जहां 'मैं' नहीं है वहीं सत्य है। यह अनुभूति ही प्रभु-अनुभूति है।

अहं का अभाव ही ब्रह्म का सद्भाव है।
चहां सबको मेरे प्रणाम कहना।

रजनीश के प्रणाम

२।१२।१९६३

●●●

[लाला सुन्दरलाल जी, बंगलो रोड—जवाहर नगर दिल्ली-७, को लिखा गया आचार्य रजनीश का पत्र]

प्रिय आत्मन् । प्रणाम् । आपके पत्र यथा समय मिल गये थे—पर मैं बहुत व्यस्त था इसलिये शीघ्र उत्तर नहीं दे सका। इस बीच निरंतर बाहर ही था; अभी जयपुर, बुरहानपुर, होशंगाबाद, चांदा आदि जगहों पर बोलकर लौटा हूं। लोग आत्मिक जीवन के लिये कितने प्यासे हैं, यह देखकर उन लोगों पर आश्चर्य होता है। जो कहते हैं कि लोगों की धर्म में रुचि नहीं रह गई है, यह तो कभी सम्भव ही नहीं है। धर्म में अरुचि का अर्थ है, जीवन में, आनन्द में, अमृत में अरुचि। चेतना स्वभाव से ईश्वरोन्मुख है। स्वरूपतः, सच्चिदानंद ब्रह्म को पाकर ही उसकी तृप्ति है। वह, जो उसमें बीज की भान्ति छिपा है। यही स्रोत है धर्म के जन्म का और इसलिये धर्मों के जन्म होंगे, और मृत्यु होंगी, लेकिन धर्म शाश्वत है।

यह जानकर बहुत आनन्द होता है कि आप धैर्य से प्रकाश पाने के लिये चल रहे हैं। साधना के जीवन में धैर्य सबसे बड़ी बात है। **बीज को बोकर कितनी प्रतीक्षा करनी होती है!** पहले तो श्रम व्यर्थ ही गया दीखता है। कुछ भी परिणाम आता हुआ प्रतीत नहीं होता। पर एक दिन प्रतीक्षा प्राप्ति में बदलती है। बीज फूटकर पौधे के रूप में भूमि के बाहर आ जाता है। **पर स्मरण रहे जब कोई परिणाम नहीं दिख रहा था, तब भी भूमि के नीचे विकास हो रहा था।** ठीक ऐसा ही साधक का जीवन है। जब कुछ भी नहीं दिख रहा होता, तब भी बहुत कुछ होता है। सच तो यह है कि—**जीवन शक्ति के समस्त विकास अदृश्य और अज्ञात होते हैं।** विकास नहीं, केवल परिणाम ही दिखाई पड़ते हैं।

मैं आनन्द में हूं। प्रभु का सान्निध्य आप को मिले यही कामना है। साध्य की चिंता छोड़कर साधना करते चलें फिर साध्य तो अपने आप निकट आता जाता है। एक दिन आश्चर्य से भरकर ही देखना होता है कि यह क्या हो गया है! मैं क्या था और क्या हो गया हूं। तब जो मिलता है उसके समक्ष उसे पाने के लिए किया गया श्रम न कुछ मालूम होता है। सबको मेरा प्रेम कहें।

कटनी प्रवास से— (१ नवम्बर १९६३.)

श्रीमती जयवंती शुक्ल जूनागढ़ को लिखा गया आचार्य श्री का एक पत्र

प्यारी जया,

प्रेम। तेरा पत्र मिला है। प्रेम मांगना नहीं पड़ता है और मांगे से वह मिलता भी नहीं है।

प्रेम तो देने से आता है।

वह तो हमारी ही प्रतिध्वनि है।

मैं प्रेम बनकर तेरे ऊपर बरसता हुआ प्रतीत हो रहा हूं क्योंकि तू मेरे प्रति प्रेम की सरिता बन गई है। ऐसे ही जिस दिन सारे जगत के प्रति तेरे प्रेम का प्रवाह बहेगा, उस दिन तू पायेगी कि सारा जगत् ही तेरे लिए प्रेम बन गया है।

जो है—उस समग्र के प्रति बेशर्त प्रेमका प्रत्युत्तर ही तो परमात्मा की अनुभूति है।

रजनीश के प्रणाम
१८-८-१९६६

सत्य और जीवन खोज की दिशा

(आचार्य श्री से कल्याण जी आनंद जी की भेंट)

(बंबई जीवन जागृति केन्द्र के सौजन्य से—)

(पिछले अंक में आपने आचार्य श्री के इस अमूल्य दृष्टिकोण को समझा कि निगेटिव माइंड को ट्रेनिंग होनी चाहिए, अन्यथा हमारा विचारक, कलाकार, संगीतकार विक्षिप्तता के घेरे में घूमेगा। अज्ञात को, शून्य को जानकर ही अनन्त पोजिटिविटी के द्वारों को खोला जा सकता है, लेकिन होगा यह निगेटिव माइंड से ही। और आगे इस अद्भुत दृष्टिकोण को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।)

हेनरी थारो पढ़कर लौटा है। उसके गांव के लोगों ने उसका स्वागत किया। एक बूढ़े ने एक बात कही उसके स्वागत में। उस बूढ़े ने कहा कि हेनरी थारो का स्वागत इसलिए कर रहे हैं कि यह लड़का विश्वविद्यालय से बिना बिगड़ा हुआ गांव वापस आ गया। इसे विश्वविद्यालय बिगाड़ नहीं पाया। यह अब भी पूछता है, यह अब भी शक करता है, यह अब भी अज्ञान में होने की हिम्मत रखता है। वह सब जो ज्ञान था, इसको ज्ञानी नहीं बना पाया।

यह तो सोचिये मत, कि वह जो हम इकट्ठा कर लेंगे वह हमें दीन बनाने में सहयोगी होगा। जीसस का एक शब्द है "पुअर इन स्प्रिट।" वह निगेटिविटी का अर्थ हुआ, "पुअर इन स्प्रिट", जो भीतर से दरिद्र है। और, भीतर एक ही समृद्धि है अनुभव की और ज्ञान की। भीतर और कोई समृद्धि नहीं है। न तो रुपये ले जा सकते हैं आप भीतर, न कुछ और ले जा सकते हैं। लेकिन अज्ञान भीतर जाता हुआ मालूम पड़ता है, अनुभव भीतर जाता हुआ मालूम पड़ता है और वह समृद्ध हो जाता है आदमी। बाहर जिनके पास पैसे हैं वे भी अकड़े हुए हैं और भीतर जिनके पास अनुभव है, ज्ञान इकट्ठा हो गया है वे भी अकड़े हुए हैं और बाहर की अकड़ से भीतर वाले की अकड़ ज्यादा है, क्योंकि न उसे चोर चुरा सकते हैं, न मुझसे छीना जा सकता है, न मुझसे कोई ले जा सकता है। वह अकड़ और ज्यादा है। तो पुअर इन स्प्रिट नहीं है वह। लेकिन किसी भी दिशा में, जहां भी जानना हो, पुअर इन स्प्रिट, वह आंतरिक एक दीनता--दीनता का मतलब एक आंतरिक निषेध, जहां समृद्ध होने का ख्याल नहीं, मेरे पास कुछ भी नहीं—और इस भाव को लेकर जहां भी खड़े हो जायेंगे वहीं बहुत कुछ दिखायी शुरू हो जायगा।

जैसे ही हम पूछते हैं कि क्यों आप प्रश्न का उत्तर देते हैं। और कारण हो सकते हैं आपके प्रश्न के उत्तर देने के। मेरा कारण यह था कि और प्रश्न उठा सकें। मैं आपको कोई उत्तर देता ही नहीं। मैं आपको उत्तर देना ही नहीं चाहता क्योंकि मैं कौन हूं जो उत्तर दूँ। और मेरा उत्तर आपका उत्तर कभी हो नहीं सकता। तो मेरी तो सारी चेष्टा, जो मैं उत्तर देता हुआ भी मालूम पड़ता हूं वह इसीलिए है कि आपके भीतर प्रश्न और गहरा हो जाये और विकराल हो जाये और कठिनाई में डाल दें और एक प्रश्न हल न हो, दस खड़े हो जायें, हजार खड़े हो जायें। और आपके भीतर प्रश्न ही प्रश्न हो जायें क्योंकि मुझे लगता यह है कि जितना प्रश्न हमारे

भीतर बड़ा होता चला जाता है उतनी ही आत्मा हमारी बड़ी होती जाती है। और आत्मा बड़ी हो। सच बात तो यह है कि हम और दूसरे इतने अलग अलग नहीं हैं जितने मालूम पड़ते हैं। अगर आपकी आत्मा बड़ी होगी तो यह असंभव है कि मेरी बड़ी न हो जाय, मुझे पता न चले यह है। एक सुकरात पैदा होता है तो सारी मनुष्यता की आत्मा में कुछ बढ़ावा आता है जो किसी को पता चले या न चले। यह सवाल नहीं है। मेरी आत्मा कोई ऐसी अलग टूटी हुई चीज नहीं है कि अकेली अलग बड़ी हो जाये। बड़ी होगी तो साथ बड़ी होगी, छोटी होगी तो साथ छोटी हो जायगी। हम थोड़ा आगे पीछे हो सकते हैं, अलग अलग नहीं हो सकते। एक लहर आगे भागी चली आ रही है उसके पीछे दूसरी लहर भागी चली आ रही है। दो लहरें अलग नहीं हो सकती हैं। कुछ आगे हो सकती हैं और कुछ पीछे हो सकती हैं, अलग अलग नहीं हो सकतीं। अन्ततः अगर गौर से देखें तो पूरी मनष्य आत्मा एक साथ ही बड़ी होती है। और यह जो बड़े होने की चेष्टा है तो जब मैं आपके बड़े होने की कामना करता हूं तो जाने अनजाने अपने को भी बड़ा कर रहा हूं। हम सब, चाहे छोटे हों तो हम दूसरे को छोटा करते हैं और बड़े हों तो हम दूसरे को बड़ा करते हैं। हम इतने अलग अलग नहीं हैं, हम इकट्ठे हैं।

प्रश्न : आपने जिस प्रश्न के बारे में चर्चा की, शून्य के बारे में, वह इतना निगेटिव नहीं है जितना दिखायी देता है। अभी जो युवक निगेटिव ट्रेनिंग की, पोजिटिविटी आपने सामने रखी है वह शायद एक नये प्रकार के कर्म क्रिया, आचरण में व्यक्ति की प्रगति के लिए कल्पना हो सकती है। तो क्या वह व्यक्ति के लिए है या एक प्रकार की निगेटिव ट्रेनिंग का मकसद सारे समाज के लिए है।

उत्तर : बिल्कुल, बिल्कुल सारे समाज के लिए ही है क्योंकि मैं मानता ही नहीं कि यह जो हमने विभाजन कर रखे हैं व्यक्ति और समाज के, यह सच में कहीं हैं।

प्रश्न : वह प्रश्न पूरा तब होगा जब उसके पीछे एक लफ्ज और लगाया जाय जो कि इस प्रकार का हो। निगेटिव ट्रेनिंग का अर्थ इंडीवीज्युअल है और उसको सोसाइटी के लिए किस प्रकार का आज के कौम में और फैक्टरीज्म लाइन के फार्म में रखा जाय। क्या वह अनारकी तक नहीं पहुंचाया जा सकता है।

उत्तर : पहुंचना ही चाहिए। अनारकी एकमात्र सुव्यवस्था है बाकी सब अव्यवस्था है। अराजक जिस दिन हम समाज को बना सकेंगे उसी दिन समाज पूरी तरह प्रगट होगा। जो थोड़ा बहुत समाज प्रगट होता है वह अराजक लोगों से प्रगट होता है। यह तो अन्तिम ख्याल है कि किसी दिन समाज उस जगह पहुंच जाय जहां अराजक हो सके, अराजक होने की सारी सुविधा हम जुटा दें कि पूरी तरह समाज अराजक हो सके। उस दिन समाज पूरा प्रगट, सारे रूपों में प्रगट होगा। अराजकता जो है वह विकास की अन्तिम कामना है। वहां विकास पूरा होता है, जहां एक एक आदमी पर कोई रोक नहीं, कोई बन्धन नहीं, जहां कोई सीमा नहीं, जहां कोई कानून नहीं। लोग जीते हैं अपने स्वभाव से। और यह अगर हम समझें ठीक से तो निगेटिव माइंड जितना विकसित होगा उतनी अराजकता अराजकता नहीं रह जायेगी। अराजकता की अपनी डिसीप्लीन है। अराजकता सिर्फ डिसीप्लीन का भाव नहीं है, अराजकता की अपनी डिसीप्लीन है, अपना अनुशासन है लेकिन वह आंतरिक है और बाह्य नहीं है। निगेटिव माइंड की भी अपनी डिसीप्लीन है लेकिन वह आंतरिक है बाह्य नहीं है। पोजीटिव माइंड की सब डिसीप्लीन बाहर से है और इसलिए पोजीटिव सोसाइटी के लिए सब डिसीप्लीन बाहर से थोपी जायगी – कानून से, पुलिस से, अदालत से। निगेटिव माइंड की डिसीप्लीन भीतर से आती है, वह उसकी सहजता से आती है। तो हम जैसे ही किसी आदमी को निगेटिव बनाने की दिशा में गतिमान होते हैं वैसे ही उसके भीतर से एक आंतरिक अनुशासन जगना शुरू होता है। और अगर पूरा समाज कभी भी, आखिरी कामना तो यह होनी ही चाहिए कि पूरा समाज ऐसा हो कि स्वभाव से चलता हो। भीतर से उसकी सारी व्यवस्था

आती हो। अगर भीतर से व्यवस्था कोई आती नहीं है तो उसका मतलब इतना ही है कि माइंड विकसित नहीं हुआ, माइंड पोजीटिव है इसलिए हम मांग सदा बाहर से करते हैं।

मैं एक लड़की से प्रेम करूं। निगेटिव माइंड प्रेम करने का पर्याप्त मानेगा और उस प्रेम से जो भी संभव होगा वह निकलेगा, वह उस प्रेम से निकलेगा। मैं साथ रहूं तो वह साथ रहना मेरे प्रेम से निकलेगा। लेकिन पोजीटिव माइंड कहेगा कि नहीं सात फेरे लगाकर विवाह होना चाहिए, रजिस्ट्री आफिस में जाकर रजिस्ट्री करवाना चाहिए, कानून का होना चाहिए। कानून कहे कि साथ रहो, कानून रोके कि अलग मत हो जाओ। प्रेम पर्याप्त नहीं है। कानून भी ऊपर से चाहिए वही प्रेम की सुरक्षा बनेगा। और मजे की बात यह है जो प्रेम पर्याप्त न हो तो प्रेम है ही नहीं, फिर व्यवस्था बनानी पड़ेगी और हम कहें कि कोई व्यवस्था मत बनाओ तो लोग कहेंगे कि फिर तो सब अराजक हो जायेगा। लेकिन क्या प्रेम की अपनी व्यवस्था नहीं है? मेरी अपनी मान्यता यह है कि अराजक सब हो गया है और जो भी महत्वपूर्ण है सब मर गया है क्योंकि वह सब सहज ही विकसित होता है, वह नियम और कानून से विकसित होता ही नहीं। वह मर गया है और पूरी ह्यमीनिटी 'एबनार्मल' हालत में है। कोई नार्मल हालत में नहीं है। पूरी मनुष्यता पागल होने जैसी स्थिति में है। सब तरफ कानून है बाप के पैर छूने हैं तो भी। एक एक व्यक्ति के भीतर उसके निगेटिव माइंड को विकसित होने दें तो उसके उस निगेटिव माइंड से डिसीप्लीन भी निकलेगी, वह जियेगा ऐसे जिसमें जीना सर्वाधिक आनंदपूर्ण हो सके। तो मेरा मानना यह है कि जो व्यक्ति अपने आनन्द के लिए थोड़ा भी जीने की कोशिश करता है वह किसी के दुख के लिए कभी चेष्टा नहीं करता, यह असंभव है। और जो व्यक्ति किसी तरह का दुख झेलता है अपने जीवन को बनाने में वह दूसरे को भी दुख देने की सब तरह की चेष्टा करता करता है। यह हमारी पूरी सोसाइटी सेडिस्ट और मैसोचिस्ट है और सब तरह के लोग इसमें इकट्ठे हो गये हैं। वह जो कानून बनाता है वह सेडिस्ट है, वह कानून को मूल्य देता है। वह कहता है कि अगर तुम्हें शादी करनी है तो जिन्दगी भर साथ रहना पड़ेगा। वह शर्त लगाता है और जिन्दगी भर साथ रहना इतना दुखद भी हो सकता है कि उसके दुख और बोझ के नीचे शादी का थोड़ा सा आनन्द था, वह फूल कहीं भी दब जाय इससे कोई मतलब नहीं। वह कहता है कि जिन्दगी भर साथ रहना पड़ेगा तभी शादी कर सकते हो अन्यथा नहीं कर सकते। अगर मुक्त रहना है तो शादी नहीं कर सकते तो प्रेम की सम्भावना से बच जाओगे और अगर प्रेम करना है तो शादी करनी पड़ेगी। वह जो सेडिस्ट है मेरी अपनी मान्यता यह है कि कानून बनाने वाले सभी सेडिस्ट होते हैं। चाहे मनु महाराज हों या कोई भी हो वह सब सेडिस्ट होते हैं। वह सताने का सब उपाय करते हैं लेकिन सताने को इस भांति छिपाते हैं कि ऐसा मालूम पड़ता है कि वह समाज के लिए और लोगों के कल्याण के लिए भारी उपाय कर रहे हैं। समाज में सेडिस्ट भी हैं और उनसे धारा प्रभावित रही है अब तक, और मैसोचिस्ट भी हैं। ऐसे लोग हैं जो खुद को दुख देने में मजा पाते हैं। ऐसे लोग कानून मानकर अपने को बिल्कुल ढांचे में खड़ा कर देते हैं। कितना ही दुख पायें अगर शीर्षासन करना नियम है तो शीर्षासन लगाकर खड़े हो जायेंगे या अपने को सताने में मजा लेते हैं। ये सताने वाले हमारे गुरू हो जाते हैं, नेता हो जाते हैं। अपने को सताने वाले और दूसरे को सताने वाले नियन्ता हो जाते हैं, स्मृतियों को बनाने वाले हो जाते हैं, कानून बनाने वाले हो जाते हैं। अब तक दुनिया सेडिस्ट और मैसोचिस्ट के चक्कर में और उनके हाथ में है इसलिए इतना पागलपन और उपद्रव है।

आदमी का निगेटिव माइंड अगर विकसित हो तो न तो आदमी मैसोचिस्ट रह जाता है, न सेडिस्ट रह जाता है, न वह किसी को सताना चाहता है, न खुद को सताना चाहता है। वह निगेटिव माइंड पहली दफा यह बात जान लेता है कि एक एक क्षण जीने जैसा है और वह इतना आनंदपूर्ण है कि उसे हम जियें। पीछे

से छोड़ें, आगे से भी हम छोड़ें और पल पल हम जियें। वह मूमेंट टू मूमेंट निगेटिव माइंड से पैदा होते हैं और वह अगर हो सके तो एक के लिए भी वहां सत्य है, देर कितनी ही लगे यह दूसरी बात है। किसी को भी सुख पाना हो तो उसे क्षण क्षण जीना पड़ेगा तो ही सुख पा सकता है। हां, दुख पाना हो तो क्षण में कभी न जिये, तो पीछे अतीत के सब इतिहास में जिये और भविष्य की सब कल्पना में जिये तो वह दुख पाता रहेगा। चाहे व्यक्ति, चाहे समाज, आज नहीं कल हमें एक जगह आना ही पड़ेगा कि हम व्यक्ति को दूर तक मुक्ति दे सकें और समाज को भी दूर तक मुक्ति दे सकें। निश्चित ही सब बदल जायेगा, राष्ट्र नहीं रह सकते, युद्ध नहीं रह सकते, जातियां नहीं रह सकतीं, धर्म नहीं रह सकते क्योंकि यह सब थोपा हुआ है, पोजीटीविटी है। यह सब खो जायेगा और इसलिए दुनिया में जितने दुखवादी हैं, पर दुखवादी हैं, वह सब बहुत परेशानी में पड़ जायेंगे और इसलिए वह नहीं चाहेंगे कि यह हो। वह सारी चेष्ठा कर रहे हैं। विश्वविद्यालय उनके हाथ में, राज्य उनके हाथ में है। सब उनके हाथ तो सारी चेष्ठा कर रहे हैं। अगर कहीं मंगल से कोई ऐसा प्राणी देखे हमें तो हमें कहेगा कि यह पूरी पृथ्वी पागल हो गयी है। अगर कोई बिल्कुल दूर का ही यात्री हमें पूरी तरह देखे और हमारा सब हिसाब देखे, वह ऐसा नहीं कहेगा हम में कि कुछ लोग पागल हैं, यह पूरा 'प्लेनेट एज ए होल' पागल है और बिलकुल मैड हाउस बन गया है और मैड हाउस जिन्होंने बनाया है वे ही नेता हैं, वे ही गुरू हैं, वे ही शिक्षक हैं, वे ही सब मैड हाउस बनाये हैं। एक भारी बगावत चाहिए दुनिया में पोजीटिव माइंड के खिलाफ।

प्रश्न : आपकी विचारधारा में और नागार्जुन की विचारधारा में क्या फर्क है ?

उत्तर : जितना फर्क मुझमें और नागार्जुन में होगा, उतना फर्क होगा। मुझमें और नागार्जुन में बहुत फर्क होंगे। मेरी बात समझ लें। विचार कोई ऐसी चीज नहीं है जो आकाश से टपक जाती है। विचार की जड़ें हैं मुझमें, वह मुझमें निकलती हैं और फैलती हैं। जैसे नागार्जुन है। नागार्जुन शून्य की तो बात करता है लेकिन मैसोचिस्ट है। वह शून्य की बात करता है लेकिन दुखवादी है। सुख भारी दुख दे रहा है। मैं दुखवादी जरा भी नहीं हूं। मैं मानता हूं कि शून्य के बाद परम हैडोनिज्म, वह अंतिम सुख और आनन्द की तलाश है। नागार्जुन आनंदवादी नहीं है। बुद्ध के पीछे जो कतार चली वह दुखवादियों की है। बुद्ध उनमें सबसे कम दुखवादी आदमी हैं जिनसे कतार चली। उनके पीछे आनेवाले भारी दुखवादी हैं और बुद्ध के विचार में उनको दुख का समर्थन मिला है। एक आदमी दुखवाद के लिए शून्य का समर्थक हो सकता है। वह कहता है किसी सार नहीं। शून्य का मतलब नागार्जुन के लिए क्या है ? शून्य का मतलब नागार्जुन के लिए सब व्यर्थ है, किसी में कुछ सार नहीं है, कोई भी चीज कोई मतलब की नहीं है, सब मीनिंगलेस है। भोजन भी व्यर्थ है, कपड़ा भी व्यर्थ है, पत्नी भी व्यर्थ है, प्रेम भी व्यर्थ है। अगर बहुत गौर से देखें तो नागार्जुन के शून्य में और शंकर के माया में कोई फर्क नहीं है क्योंकि दोनों ही एक हैं। शंकर ने नागार्जुन के शून्य से ही माया चुरायी हुई है पूरी की पूरी। शंकर और नागार्जुन में कोई फर्क नहीं है। मुझमें और नागार्जुन में तो जमीन आसमान का फर्क है। सच बात तो यह है कि मैं धर्म की बात कर रहा हूं। और जिस धर्म की बात कर रहा हूं वह वैसा ही है कि अगर चारवाक धर्म की बात करे या एपीकोरफ धर्म की बात करे तो मैं वैसे धर्म की बात करता हूं। चारवाक ने धर्म की बात नहीं की है और न एपीकोरफ ने की है। मेरा अगर ताल मेल है तो चारवाक और एपीकोरफ से है लेकिन उन्होंने धर्म की बात नहीं की है। तो धर्म की बात जब मैं करता हूं। तो धर्म की बात का ताल मेल खाता है नागार्जुन से, शंकर से, बुद्ध से। मैं बात वह कर रहा हूं जो शंकर और बुद्ध ने की है, नागार्जुन ने की है और कर रहा हूं वहां से जहां से एपीकोरफ और चारवाक करें इसलिए बड़े उलझन का मामला है। मैं खुद तो सुखवादी हूं, निपट सुखवादी हूं।

प्रश्न:—आजकल जो एल० एस० डी० तथा मिस्कलीन ड्रग हैं - क्या वे शून्य की ओर ले जाते हैं ?

उ० - नहीं, वह जरा भी नहीं क्योंकि असल में एल एस डी मिस्कलीन या मैरीजुआना शून्य को भुलाने की कोशिश है, जाने की कोशिश नहीं है। वह भी एस्केपिस्ट है। वह तो हमारा ऋषि सोमरस को बहुत दिन से प्रयोग कर रहा है, गाँजा और अफीम हमारे मुल्क में सन्यासी बहुत दिन से प्रयोग कर रहे हैं। वह जो देखा है शून्य, उनको भुलाने की चेष्टा है, वह फर्गेटफुलनेस (Forge-tfulness) की आखिरी चेष्टा है। सोमरस से लेकर एल एस डी तक वह एक ही कथा है। वेद में भी कुछ ऋषि वहां पहुंच गये हैं जहां शून्य है और उसे इतनी घबराहट और बेचैनी पैदा हो गयी है कि अब किसी तरह भुलाना उसे जरूरी है। फिर नाचो, गाओ, गीत गाओ, शराब पियो, सोमरस पियो, कुछ भी करो, इसे भूल जाओ। मेरा कहना है, शून्य में छलांग लगाओ, घबराओ मत। मेरा कहना है शून्य से घबराकर लौट मत आओ। लौटने का रास्ता कोई भी हो, लौटो मत क्योंकि लौटकर तुम या तो पागल हो जाओगे और या नशे में धुत हो जाओगे। दो में से कोई रास्ता नहीं। पागलपन से बचना होगा तो नशा करना होगा, नशे से बचोगे तो पागल हो जाओगे, लौटो मत। मनुष्य उस जगह पहुंच गया है जहां उसे शून्य का साक्षात्कार, एनकाउंटर करने की हिम्मत जुटानी चाहिए। उसका एनकाउंटर करो, शून्य विलीन हो जायेगा, वह परम सत्ता प्रगट हो जायेगी, जो है, एनकाउंटर से होगा यह।

प्रश्न—क्या ये ड्रग व्यक्ति को पागल बनाते हैं ?

उत्तर—ड्रग लेने से कोई मेड नहीं होता। मेड भी ड्रग ले सकता है यह दूसरी बात है लेकिन एल. एस. डी, लेने से कोई पागल नहीं होता है। एल एस. डी. में कोई तत्व ही नहीं है कि किसी को पागल कर दे। एल. एस. डी. के साथ तो खूबी यह है कि आप जो होओगे एल. एस. डी. आपको वही कर देगा, ज्यादा प्रगट कर देगा। अगर आप पागल हो तो आप ज्यादा पागल दिखायी पड़ने लगोगे, अगर आप गंभीर हो तो ज्यादा गंभीर हो जाओगे, अगर पेंटर हो तो ज्यादा पेंटिंग में लग जाओगे, अगर कवि हो तो ज्यादा गीत गाने लगोगे। एल. एस. डी. का जो उपयोग है वह तो जो आप हो उसको पूरी तरह उभार देता है। और उससे ज्यादा उसका कोई मतलब नहीं। अगर आदमी पागल हो तो पागल हो जायेगा, और एक आदमी भूत प्रेत देखता है और एल. एस. डी. ले लेगा तो भूतप्रेत इतने भारी दिखायी पड़ने लगेंगे अगर मीरा को एल. एस. डी. दे देंगे तो कृष्ण ही कृष्ण दिखायी पड़ने लगेंगे। वह जो आपका माइंड है एल. एस. डी. उसको पूरा का पूरा कर देगा उसमें शक सुबहा सब मिटा देगा। जैसा भी आपका माइंड है—इसलिए हमने एल. एस. डी. लिया तो उसको ऐसा लगा कि कबीर का जो अनुभव हुआ वह मुझे हो रहा है लेकिन दूसरों ने लिया तो उनको ऐसा नहीं लगता है क्योंकि जो आपके माइंड में है वही प्रगट हो जायेगा। एल. एस. डी. आपके भीतर जो है उसे प्रगट कर देगी और कुछ नहीं करेगा। मगर ये सब बचाव हैं। हिप्पीज हैं या बिटनीक हैं, ये एक तरह की बगावत है, लेकिन बच्चे की बगावत है, एक विचारशील बगावत नहीं है वह।

प्रश्न—शून्य में जाने का कोई माध्यम है क्या ?

उत्तर—जरूर ध्यान को मैं शून्य की तरफ जाने का माध्यम मानता हूं।

प्रश्न—यह हिप्पीका जो आजकल का व्यवहार है ?

उत्तर—हां, यह बने रहेंगे। असल में हिप्पीज से अब दुनिया कभी मुक्त नहीं होगी।

प्रश्न—मेरा मतलब यह कि ये जो ड्रग वगैरह लेते हैं तो क्या इसे लेने से शून्य की तरफ जाने का इसे माध्यम जाहिर करते हैं ?

उत्तर—नहीं, नहीं, जाहिर कर रहे हैं। वह हर यह कर रहे हैं असल में कि एक खास जगह संकट

के करीब मनुष्य का मन पहुंच गया है। यह हमें पता नहीं है। एक खास संकट की जगह मनुष्य का मन पहुंच रहा है। उसमें कोई आगे है कोई पीछे है दूसरी बात है। नये बच्चे उसके ज्यादा निकट हैं, बूढ़े आदमी उसके जरा दूरी पर हैं और जो मुल्क जितना विकसित है वह उससे उतना निकट है, और जो मुल्क जितना कम विकसित है उतनी दूरी पर है। हिन्दुस्तान में हिप्पी पैदा नहीं हो सकते। उपाय नहीं है पैदा करने का अभी। वह जो करीब करीब बार्डर लाइन पर खड़े हो गये हैं नये युवक जाकर, उनको आपकी पुरानी दुनिया पूरी तरह बेमानी, एब्सर्ड थी, यह दिखाई पड़ रहा है। आपने जो मूल्य बनाये थे वे सब फिजूल और बेवकूफी के मालूम पड़ रहे हैं और सच बात यह है कि जो भी सोचेगा उसे मालूम पड़ेगा। तो पुरानी जगह से पैर उखड़ गये, पुराना कोई सार्थक नहीं मालूम हो रहा है और आगे भयानक शून्य है। आगे कुछ दिखायी नही पड़ता कि और कोई वेल्यू हो सकते है। आगे कुछ है नहीं और पीछे का सब उखड़ गया है। इस हालत में दो उपाय हैं, या तो वह हिम्मत करके इस एबिस में उतर जाय या फिर एल एस डी लेकर सो जाय। बार्डर लाइन पर खड़े हुए आदमी के लिए दो ही उपाय हैं, या तो वह जम्प लगा ले, फिर जो भी होगा और या फिर वह एल एस डी ले ले क्योंकि पीछे से उखड़ गया, पीछे लौटने का उपाय नहीं। वह पुल गिर गया, वह ब्रिज गिर गया जिससे हम कल तक चले थे। या हो सकता था, वह था ही नहीं, सिर्फ कल्पना थी और हम सोचते थे कि है और इसलिए बड़े मजे से चल रहे थे। वह तो गिर गया। वह जो हिप्पी जैसा युवक है आज वह पीछे का ब्रिज गिर गया, आगे कोई ब्रिज है नहीं और इतनी पतली लकीर पर वह खड़ा है मूल्यों की कि डर लगता है कि कहीं गिर न जाय। तो नशा लेता है, फिर भूल गया। फिर ब्रिज दिखायी पड़ने लगता है आगे पीछे सब होने लगता है। तो मेरा कहना यह है कि जिस हिप्नोटिज्म के भीतर मनुष्यता जी रही थी अब उसको पैदा करने के लिए ड्रग के बिना कोई रास्ता नहीं है। वह हिप्नोटिज्म तो टूट गया, एक हिप्नौसिस थी, हमारा बुजुर्ग उसमें जी रहा था वह तो टूट गया। अब उसको पैदा करना हो तो उसको ड्रग से पैदा करो या फिर तैयारी दिखाओ कि हम बिना ब्रिज के जियेंगे, हम ब्रिज की मांग ही नहीं करते, हम शून्य में ही जियेंगे हम अब मूल्य की बात ही नहीं करते। हुआ क्या है, पुराना मूल्य तो टूट गया है लेकिन पुराने मूल्य की मांग नहीं टूटी। क्योंकि यह बच्चा पैदा तो हमसे हुआ है। इसके एक्सपेक्टेशन वही हैं जो हमारे हैं लेकिन यह उस जगह जाकर खड़ा हो गया है जहां पुराना कोई मूल्य नहीं है और मूल्य की माँग इसकी भी है तो यह कठिनाई में पड़ गया है। यह पागल जो दिखायी पड़ रहा है इसका पागलपन यही है कि इसकी मांग तो यही है कि पुराने मूल्य भीतर से रहें। आज भी अगर यह किसी लड़की के साथ रहेगा, तो मांग तो पत्नी वाली ही है लेकिन पत्नी होने वाला मूल्य खत्म हो गया। मांग तो इसकी पति होने की है लेकिन वह पति होने वाला मूल्य खत्म हो गया। अब इसके सामने बड़ी दिक्कत हो गयी है। या तो यह बिना पति हुए प्रेमी होने के लिए तैयार हो जाये याने बिना किसी मूल्य के जीने को तैयार हो जाये या फिर नशा कर लें। तो वह जो हिप्पी हैं एक तरफ से शुभ लक्षण है। वहां से आगे बढ़ना होगा। चालीस वर्ष लगेंगे। कुछ लोग हिम्मत करके छलांग लगा रहे हैं इसलिए हिप्पी में से जो ज्यादा विचारशील लोग हैं वे एकदम ध्यान और उसपर विचार करने में संलग्न हो गये हैं।

प्रश्न—आपको मैं मैटेरियलिस्ट कहूं या स्प्रिच्यु-लिस्ट कहूं ?

उत्तर—मैंने वही कहा कि मैं एपीकोरफ जैसा आदमी हूं। जो बुद्ध हो जाय। मैटिरियलिस्ट मैं नहीं हूं। मैं मानता यह हूं कि मैटर और स्प्रिट की लड़ाई ही नासमझी की है एक ही चीज है, उसे मैटर कहो, स्प्रिट कहो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता इसलिए मैं मैटेरियलिस्ट नहीं कह सकता अपने को। स्प्रिच्युअलिस्ट भी नहीं कह सकता क्योंकि मैं मानता हूं कि वह डिवीजन ही नास-मझी का था। उस डिवीजन में मैं कहीं खड़ा नहीं होता। मैं मानता हूं चीज एक ही है वही दिखायी पड़ रही है मैटर

की तरह और नहीं दिखायी पड़ रही है आत्मा की तरह। एक चीज के दो छोर हैं। मैं क्या कहूं अपने को, बहुत मुश्किल मामला है। क्या कहना चाहिए, अभी कोई शब्द नहीं है मेरे पास।

प्रश्न—आज देश में कैसा नेतृत्व होना चाहिए ?

उत्तर—जिसको नेतृत्व कहें वह मुल्क में है ही नहीं। बहुत ही कमजोर किस्म के लोग हैं। न उनकी कोई दिशा है, न कोई दृष्टि है। नेता होने भर का मजा है। बातचीत में एकदम सामान्य हैं। नेतृत्व ही नहीं है देश में सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। बुरा नेता भी हो, नेता तो हो। वह भी नहीं।

प्रश्न—क्या आपकी दृष्टि में अराजकता को हैल्प करनी चाहिए ?

उत्तर—नहीं, देश में अराजकता नहीं है। अराजकता को हेल्प करें तब तो बड़ा अच्छा है लेकिन कर नहीं पाते। क्योंकि सारे उपद्रव में भीतर से तानाशाही के सिवाय कुछ भी पैदा नहीं हो रहा है। अराजकता इससे नहीं पैदा होती। यह जो सब चल रहा है इसका पूर्व आयोजन है। इस तरह अनारकी पैदा होती नहीं और अनारकी तभी पैदा हो सकती है जब बड़ी दुर्व्यवस्था हो। उससे अनारकी पैदा हो सकती है, अव्यवस्था से नहीं पैदा होती।

प्रश्न—क्या नेता होने के साथ उसकी दर्शन लाईफ भी अच्छी होनी जरूरी है ?

उत्तर—बिल्कुल जरूरी नहीं है। यह भी इस मुल्क की नासमझी है।

जितना ज्यादा एजूकेटेड आदमी होता है उतना ही विकसित होता है। जिसको केरैक्टर वगैरह कहते हैं वह उसमें फिट बैठ जायेगा। बुद्धिमान आदमी एकदम फिट नहीं बैठता। पच्चीस तर्क उसको दिखायी पड़ेंगे क्योंकि वह अपने ढंग से जीना चाहेगा। वह केरैक्टरलैस है, ऐसा नहीं है सवाल। और जिसको आप केरेक्टर कहते हैं उनको वह बहुत मामूली मानता है। केरैक्टर का होगा वह, लेकिन केरैक्टर की डिफीनीशन उसकी अलग अलग हो जायेगी। जिसको हम केरैक्टर कहते हैं उसको वह केरैक्टर नहीं भी कहने वाला है क्योंकि जिसको हम केरैक्टर कहते हैं वह चार पांच हजार साल पहले बनायी हुई बात है। इसलिए मेरा मानना यह है कि हमारी ये अपेक्षाएं गलत हैं, ये अपेक्षाएं हमें नहीं करनी हैं।

प्रश्न—शहर में और गाँव में रहने में फर्क ? शहरों में सड़कों पर पेशाब करो तो जुर्माना हो जायेगा। इसी तरह सोसाइटी को इकट्ठी रखने के लिए, ताकि झगड़े न हों, ऐसे नियम बनाने पड़ते हैं। क्या कोई ऐसी तरकीब है जिसको केरैक्टर कहा जाये ?

उत्तर—हां, बिल्कुल कहा जा सकता है। जैसे बुनियादी रूप से व्यक्ति का व्यवहार जितना जागा हुआ, होशपूर्ण, अवेयरनेस का हो उतना उस आदमी को मैं चरित्रवान कहता हूं। मेरा मानना यह है कि एक व्यक्ति, जितना अमूर्च्छित होशपूर्वक जीता है उतना उसके जीवन में दूसरे को दुख देने, पीड़ा करने, परेशान करने के मौके कम से कम होते हैं। जैसे कि अगर मैं बहुत होशपूर्वक जीऊं तो क्रोध करना बहुत मुश्किल हो जायेगा क्योंकि क्रोध करने के लिए बेहोश होना बिल्कुल जरूरी बात है।। वह नहीं रहा लक्ष्य तो मैं क्रोध कर ही नहीं सकता। क्रोध करूंगा तभी जब बेहोश हो जाऊंगा। तो अमूर्च्छित व्यवहार को, कांसस व्यवहार को मैं चरित्र का एक बुनियादी लक्षण मानता हूं। दुनिया में कहीं भी चरित्र हो, किसी तरह का हो, कोई भी रूप हो उसमें यह बात तो होनी ही चाहिए।

दूसरी बात, आमतौर से सारे चरित्र की धारणाएं समय से, काल से, परम्परा से पलती रहती हैं। उनमें

से कुछ सारभूत खींचा जा सकता है। जैसे जीसस का एक वचन है कि जो तुम चाहो कि कोई तुम्हारे साथ आये तो तुम दूसरे के साथ खड़े हो, इसे एक असेंसियल क्वालिटी केरैक्टर की मानी जा सकती है। मैं आपके साथ वही करने की कम से कम कोशिश तो करूं, जो मैं आपसे मेरे तरफ चाहता हूं। अब इसमें समय की कोई जरूरत नहीं है। कोई भी समय हो, कोई भी धारणा हो, यह बात अर्थपूर्ण रहेगी क्योंकि उस आदमी को हम चरित्रहीन कहेंगे जो आदमी आपसे तो सम्मान चाहता हो और खुद अपमान देता हो। यह चरित्रहीन आदमी है जो आपसे तो प्रेम चाहता हो और खुद घृणा देता हो। यह अजीब बात है जो आपसे चाहता हो कि मुझे सुख दो और आपके सुख की जरा भी फिक्र नहीं करता हो। इसका मतलब यह हुआ कि चरित्रवान आदमी हमेशा दूसरे की जगह में अपने को रखकर सोचेगा। वह देखेगा कि मैं इस जगह होता तो मैं किस जगह खड़ा होता, तो क्या चाहता, वह मुझे करना चाहिए। और अगर उससे अन्यथा मैं करता हूं तो नीचे गिरता हूं।

तीसरी, बात, क्योंकि हम समय को सबसे अलग कर लें। मनुष्य की चरित्रहीनता के चाहे कोई रूप हों वह जहां से पैदा होते हैं उस रूप का स्पष्ट ज्ञान होना जरूरी है। जैसे क्रोध या लोभ है या मोह है, आदि बातें हैं। ये मेरे भीतर कहां हैं, कैसे उठती हैं, क्यों उठते हैं। दमन करने को मैं चरित्र नहीं कहता। दमित आदमी खतरनाक होगा। वह कभी चरित्रवान दिखेगा लेकिन यह सिर्फ दिखने वाला है। तो चरित्रवान आदमी का मैं तीसरा लक्षण यह मानूंगा कि वह दिखने वाला चरित्र खड़ा न करे, यानी पाखंड न हो, हिपोक्रेट न हो तो चरित्रवान आदमी पाखंडी नहीं होगा। वह जैसा है वैसा होगा और वैसा जाहिर करना पसंद करेगा जैसा भी है। अगर मैं लोभी हूं तो मैं कहूंगा कि मैं लोभी आदमी हूं। अगर आपको लोभी से डर हो तो मुझसे सावधान रहना चाहिए। मैं लोभी आदमी हूं। अभी मैं चोर हूं और आपके घर में ठहरूंगा तो मैं कहूंगा कि मैं चोर आदमी हूं, मैं कोई चीज ले जा सकता हूं मैं पाखंड को सबसे बड़ी चरित्र हीनता मानता हूं कि मैं वैसा दिखाने की कोशिश करूं जैसा मैं नहीं हूं। वैसा ढोंग रचूं जैसा मैं नहीं हूं और एक तरह का व्यक्तित्व बनाऊं, चरित्रवान आदमी इकहरे तरह का व्यक्ति हो, उसकी पर्सनलिटी एक होगी और इसके लिए वह सब दुख, सब परेशानियां झेलने के लिए राजी होगा। इकहरे व्यक्तित्व को लाने की हिम्मत जुटायेगा। तो चाहे कैसे भी काल हों, कोई भी व्यवस्था हो, कोई भी चरित्र की मान्यता हो वह आदमी जैसा है वैसा वह अपने को बताने की बात पसंद करेगा कि मैं ऐसा आदमी हूं। इन बातों पर अगर हम ध्यान रखें तब तो नेतृत्व में भी ये बातें होनी चाहिए। नेतृत्व में क्या, प्रत्येक व्यक्ति में होनी चाहिए। लेकिन जिसको हम आमतौर से चरित्र कहते हैं वह अत्यन्त काल सापेक्ष होगा और काल के बीच में से वह खतरनाक हो जाता है और पाखंडी बनाने लगता है क्योंकि समय जो बीत जाता है उसकी कोई जगह तो नहीं रह जाती लेकिन वह हमारे छाती पर चढ़ा रह जाता है और उसको दिखावा करने की जरूरत पड़ती है। और जैसा कि हिन्दुस्तान के नेतृत्व को गलत ले जाने का जो कारण हुआ वह यह हुआ कि गांधीजी ने एक तरह की सादगी लोगों के ऊपर थोपी। कोई आदमी सादा हो तो बिल्कुल दूसरी बात है लेकिन सादगी थोप दी जाय तो बड़ी खतरनाक बात है। जिन लोगों ने सादगी का गांधी जी के साथ व्यवहार किया उनके मन में विशेष होने, सुख सुविधा की, वैभव की, प्रतिष्ठा की, यश की बहुत सी दबी हुई कामनाएं इकट्ठी हो गयीं और इधर वे सादे, सादगी, सरलता, झोंपड़ा ये सब चलता रहा और उधर भीतर यह सब इकट्ठा हो गया। जैसे ही सत्ता हाथ में आयी उसका एक विस्फोट हो गया और दबी जो है हमारे भीतर सब ठिकाने पर है। विस्फोट होता है। वैसे विस्फोट होने में घबराहट है क्योंकि मर जायेंगे आप यदि विस्फोट हो गया। हिन्दुस्तान में जिन लोगों को गांधीजी ने खड़ा किया उनको एक झूठे व्यक्तित्व का आधार बनाकर खड़ा कर दिया

था। ताकत हाथ में आयी कि वह सब व्यक्तित्व तो बह गया और भीतर का असली आदमी बाहर आ गया और वह बिल्कुल उल्टा साबित हुआ और वह था ही ऐसा। अब उसका मानना है कि इससे अच्छा हुआ होता कि हम सीधे सादे आदमी को जानते होते कि यह आदमी ऐसा है और यह स्वाभाविक है। तो नेतृत्व के सामने जो एक पाखण्ड फैला है वह दिखा कुछ रहे हैं कर कुछ रहे हैं, हो कुछ रहा है। सारी दुनिया में हमसे ज्यादा ईमानदारी है इस मामले में। इधर पांच छः हजार साल से पाखंड खड़ा किया है। तो इतनी हिपोक्रैसी खड़ी कर दी कि मुश्किल है और ऐसा भी नहीं कि वह आदमी बहुत कांशस है इस बात के लिए जो ऐसा कर रहा है। सब अनकांशस हो गया है। वह दो तरह का व्यवहार करता है। जब वह मंच पर आता है तो एक तरह का आदमी हो जाता है और जनता में अलग तरह का आदमी हो जाता है।

एक तो सजग व्यवहार हो और जागा हुआ आदमी चाहिए, एक एक क्षण। दूसरे की जगह अपने को रखने की क्षमता चाहिए। ये तीन क्वालिटियां हैं जिनको मैं मानता हूं कि आदमी चरित्रवान है चाहे वह चोर ही हो, यह मैं नहीं कहता। मैं मानता ऐसा हूं कि वह हो नहीं सकता, इन क्वालीटीज को सम्हलकर करने वाला।

अभी नागार्जुन की बात चली थी। नागार्जुन एक राजधानी से गुजरता है और वह एक नंगा भिक्षु है। साथ में लकड़ी का पात्र रखता है। उस गांव की जो महारानी है वह उससे बहुत प्रभावित है। नागार्जुन को उसने भोजन के लिए बुलाया। वह भिक्षा लेने गया है। रानी ने उसके हाथ से भिक्षा पात्र ले लिया और कहा कि यह तो मैं रख लूंगी स्मृति में। आपके लिए दूसरा भिक्षापात्र बनाया है। उसने एक सोने का भिक्षापात्र बनाया है और उसमें बहुमूल्य मणि माणिक लगाया है, लाखों रुपये की कीमत का है। वह नागार्जुन के हाथ में दे देती है। उसको ख्याल था कि शायद वह इन्कार करेगा कि यह सोना मैं नहीं लूंगा। जैसी हमारी अपेक्षा होती है सन्यासी से। लेकिन नागार्जुन, जो सब चीजों को शून्यवत मानता है, क्योंकि उसमें वह कोई फर्क नहीं करता है कि वह लकड़ा का है कि सोने का है। वह पात्र लेकर चल देता है। रानी हैरान होती है। उसने एक दफा भी यह नहीं कहा कि यह सोने का है और मैं तो भिक्षु हुं, इसे नहीं लूंगा। रास्ते में सबकी नजरें पड़ती हैं क्योंकि सूरज की रोशनी में वह पात्र चमक रहा है और वह नंगा आदमी सोने का पात्र लिए चले जा रहा है। एक चोर उसके पीछे हो लेता है। कितनी देर यह नंगा आदमी इसको बचायेगा। नागार्जुन भी पीछे आते उसके पैर की आवाज सुन कर समझ जाता है क्योंकि उसके पीछे तो कोई कभी आता नहीं। वह इस पात्र के पीछे ही आता होगा। वह एक मरघट में ठहरा हुआ है एक खण्डहर में। उसमें न कोई द्वार है, न दरवाजा है। वह अन्दर चला गया है, दोपहर का वक्त है, वह सोने को है। वह सोचता है कि वह नाहक बेचारा बाहर बैठा हुआ है दीवाल से चिपक कर। वह न मालूम कितनी देर बैठा रहेगा। इतनी देर बिठाने के लिए मैं क्यों उसे परेशान करूं और फिर वह चुरा के तो ले ही जायेगा क्योंकि मैं अब सोऊंगा और वह चुरा के ले जाय, यह चोर बनाने का जिम्मा भी मैं क्यों लूं। तो उस पात्र को उठाकर बाहर फेंक देता है खिड़की से। जहां चोर बैठा है वहां वह पात्र गिरा। वह चोर तो हैरान होता है। एक तो वैसे ही यह आदमी अद्भुत था कि नंगा है और इतना बहुमूल्य पात्र लिए हुए है। फिर वह चोर उसको धन्यवाद देने के लिए खिड़की से सिर निकालता है और कहता है कि मैं धन्यवाद देता हूं। आश्चर्य कि यह पात्र आपने बाहर फेंक दिया। मुझे पहले ही शक होता था कि नंगे आदमी को कहां से इतना कीमती पात्र मिला। फिर वहां से आपने फेंक दिया जैसे किसी मूल्य का न हो। मैं चोर हूं, कभी कभी मेरे मन में ऐसा होता है कि कब हमारी भी ऐसी हिम्मत हो। चोर तो हूं लेकिन मन होता है कि कब हमारी भी ऐसी हिम्मत हो। क्या मैं भीतर आकर थोड़ी देर बैठ सकता हूं आपके पास? नागार्जुन कहता है कि मैंने पात्र इसीलिए बाहर फेंका। वैसे भी तुम

भीतर आते लेकिन तब तुमसे मिलना नहीं होता इसलिए पात्र पहले फेंक दिया कि तुम भीतर आओ और मिलना भी हो जाये, तुम आजाओ भीतर। चोर आकर बैठ जाता है और कहता है कि मैं कई साधु संतों के पास जाता हूं। मैं भी शांति चाहता हूं, आनन्द चाहता हूं, सत्य चाहता हूं, चोर हुआ तो क्या, यह तो मुझे भी चाहिए। चोर होने से तो ऐसा मुझे नहीं चाहिए, ऐसा नहीं है। लेकिन वे सब साधु संत मुझे यह कहते हैं कि पहले तू चोरी छोड़। चोरी छूटती नहीं, चूंकि मैं चोर हूं। तो क्या कोई रास्ता नहीं है कि मैं चोर रहूं और जो मैं चाहता हूं वह मुझे मिल जाय। तो नागार्जुन उससे कहता है कि तू फिर साधु संतों के पास गया ही न होगा। पिछले जमाने के किन्हीं चोरों के पास पहुंच गया होगा। साधु को क्या मतलब तेरी चोरी से ? तू कुछ भी कर। साधु तो साधुता से मतलब, साधु को चोरी से क्या मतलब ? तू कुछ तो हो गया, वह तेरा जानना है। तू साधु के पास गया ही नहीं। वह चोर कहता है कि मेरी आपसे बात बैठ सकती है। तो मैं चोर रहते हुए कुछ कर सकता हूं ? नागार्जुन कहता है, यह मैं तुझे करने को कहता हूं, यह तू कर। वह उसको कहता है कि जो भी काम तू कर पूरे होश से कर। चोरी भी कर तो होश से कर, जानते हुए कर कि यह तू कर रहा है और एक एक हाथ उठाओ सामान निकालने के लिए किसी की तिजोरी से तो पूरे जागरूक रहकर निकाल। मैं तुझसे और कुछ कहता नहीं। अगर तेरा दिल हो तो मैं १५ दिन तक यहाँ रहता हूं, तू फिर आ जाना। वह चोर तो तीसरे चौथे दिन वापस आता है और कहता है कि मुझे मुश्किल में डाल दिया आपने। बहुत मुश्किल में पड़ गया क्योंकि कल मैं घुस गया महल में और तिजोरी पर पहुंच गया, तिजौरी खोल ली। जब होशपूर्वक हाथ डालता हूं तो हंसी आती है और हाथ भीतर नहीं जाता है। यह मैं क्या कर रहा हूं और जब हाथ भीतर जाता है-सामान, सामान निकाल लाता हूं तब मैं बेहोश होता हूं। मुझे बहुत मुश्किल में डाल दिया। होश में तो चोरी हो ही नहीं सकती। वह नागार्जुन कहता है कि हम कोई चोर नहीं है, हम चोरों की बात ही नहीं करते, हमें क्या मतलब ? तुम्हें चोरी करनी है तुम बेहोश रहो। चोरी के लिए हमसे मत कुछ पूछो। चोरी के लिए हम कुछ कहते नहीं। हम तो इतना ही जानते हैं कि तुम होशपूर्वक जो भी करते हो करो और नागार्जुन ने वहां उससे कहा कि जो होशपूर्वक किया जा सके वही धर्म है और जिसके लिए बेहोश होना जरूरी है वही अधर्म है। इसलिए अधर्म छोड़ने का सवाल ही नहीं, सिर्फ होश में जीना है। मैं कैरेक्टर का इसको बुनियादी हिस्सा मानता हूं।

प्रश्न : बेहोशी में होश नहीं है, यह कैसे मालूम पड़े ?

उत्तर : वह हमेशा पीछे मालूम पड़ता है। घटना के बीत जाने के बाद। जैसे मैंने क्रोध किया। जब तुम क्रोध में हो तब तुम्हें होश नहीं, लेकिन क्रोध गया तो तुम लौटकर देखते हो, अरे, यह मैंने क्या कर लिया ? यह तो मैं कभी करता ही नहीं अगर मुझे होश होता। एक सेकैंड की बात है न ? कोई ऐसा नहीं है कि महीनों बीतें।

प्रश्न : यह होश ही नहीं पकड़ जाता है, यह जो होश है चोरी करने जाता है, उसने कहा, होश में जब रहता हूं तब हाथ नहीं डालता।

उत्तर : हां हां, वह वहीं बैठकर तिजौरी पर प्रयोग कर रहा है। वह जब परिपूर्ण होश से हाथ डालता है तो हाथ रुक जाता है। जो भी यह हो रहा है वह पूरे के लिए कांसेस है यहां। जो भी है उस वक्त, उसके भीतर-बाहर, चारों तरफ वह पूरे कांसेस में है। जैसे ही होश होता है, हाथ रुक जाता है।

(समापन अगले अंक में)

★

आचार्य श्री के आगामी देश व्यापी कार्यक्रम

दिनांक	स्थान	कार्यक्रम	संयोजक
११, १२, १३ एवं १४ नवंबर	सुरेन्द्र नगर	सत्संग	श्री अनूपचंद एम. शाह, दुधरेज लेविल क्रॉसिंग के पास सुरेन्द्र नगर
१८ नवंबर	जबलपुर (शहीद स्मारक)	प्रवचन	श्री भीकमचंद, जीवन जागृति केन्द्र, ३८९, हनुमानताल, जबलपुर।
२४, २५, २६, २७, २८ एवं २९ नवंबर	बंबई	सत्संग	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं० ५३ एम्पायर बिल्डिंग, डा० डी. एन. रोड, बंबई : १, फोन २६४५३०
९, १०, ११ एवं १२ दिसंबर	जूनागढ़	साधना-शिविर	डा० एच० पी० शुक्ल, अनवर स्ट्रीट, काठियावाड, जूनागढ़।
२३, २४, २५, एवं २६ दिसंबर	अहमदाबाद	सत्संग	श्री जे० एम० ठाकर, C/o डायचेम कार्पोरेशन, खादिया चार रास्ता, अहमदाबाद फोन-२४०८३

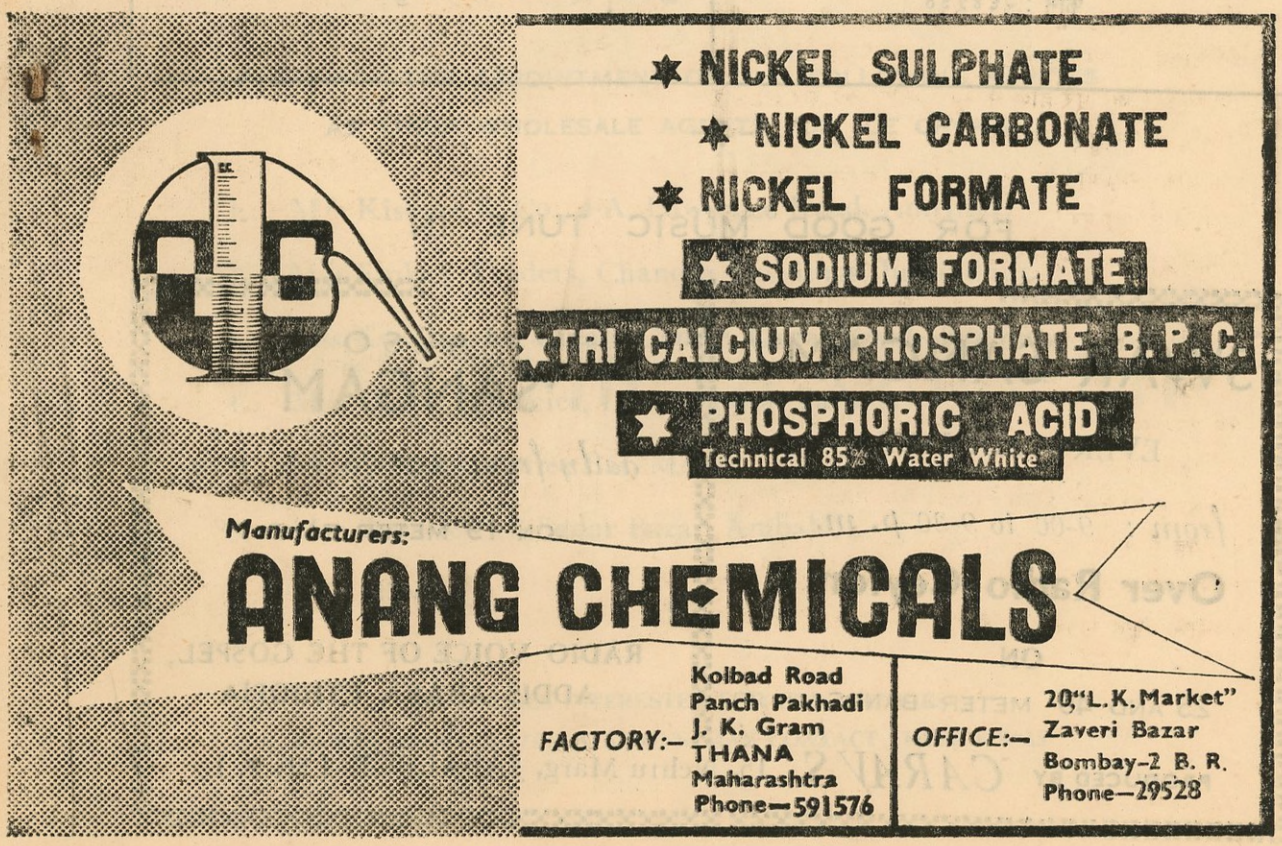

आचार्य श्री रजनीश की अमृतवाणी की
त्रैमासिक पत्रिका

"ज्योति शिखा"

(मनुष्य के आध्यात्मिक पुनरुत्थान के लिऐ समर्पित)

सम्पादक : श्री महिपाल

वार्षिक शुल्क : ५ रु० — एक प्रति : १.२५ न.पै.

प्राप्ति स्थल—
जीवन जागृति केन्द्र, एम्पायर बिल्डिंग, रूम नं० ५३,
दादाभाई नौरोजी रोड, बम्बई-१.
फोन : २६४५३०

आचार्य श्री रजनीशजी की सृजनात्मक जीवन दृष्टि का
पाक्षिक पत्र

युक्रांद

वार्षिक शुल्क—१२)

देश के कोने-कोने में
विक्रय एजेन्ट नियुक्त करना है

सम्पर्क करने तथा शुल्क भेजने का
पता
अरविंदकुमार, सदस्य, युक्रांद प्रकाशन समिति,
कमला नेहरू नगर, जबलपुर । फोन : २६५७.

FOR GOOD MUSIC TUNE IN

'SWAR SANGAM'

EVERY SUNDAY

from : 9-00 to 9-30 p. m.

Over Radio Ceylon

ON

25 AND 49 METER BANDS

ALSO
'SANGAM'

daily from 8-10 to 8-40 p.m.

ON 19 METER BAND

OVER

RADIO VOICE OF THE GOSPEL.
ADDIS ABABA ETHIOPIA

PRODUCED BY *CARAVS* 15, Nehru Marg, JABALPUR (M. P.)

Kwality

ICE CREAM

90-A, Industrial Area, Ludhiana

•

ANNOUNCE THE APPOINTMENT OF THE FOLLOWING PARTIES
AS THEIR WHOLESALE AGENTS FOR ICE CREAM

1. M/s Kishore & Co., 4-A Lawrence Road, Amritsar.
2. M/s Emkay Traders, Chandra Buildings, Jullundhur.
3. M/s Kwality Ice Cream Centre, Canal Road, Jammu.
4. M/s Upkar Agencies, Dharampura, Patiala.
5. M/s Subhash Coffee Bar, Moga.
6. M/s Sood & Co., Sadar Bazar, Ambala.

•

THE PARTIES INTERESTED FOR SUB-AGENCIES
IN THE ABOVE NOTED STATIONS MAY CONTACT THESE FIRMS

उत्तम तम्बाकू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और पहलवान छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

—०—

मोहनलाल हरगोविंददास

(जबलपुर म० प्र०)

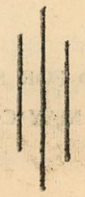

When you wear

Sikova

EMBROIDERED FABRICS

the best compliments come to you!

Stronachs Z 34

मानसेवी सम्पादक अजितकुमार, एम. काम., एल एल. बी., स्वत्वाधिकारी प्रकाशक: युक्रांद प्रकाशन समिति, कमला नेहरू नगर, जबलपुर। मुद्रण स्थल : जबलपुर को-आप० प्रिंटिंग प्रेस, गोलबाजार, जबलपुर

अगर सबके भीतर परमात्मा है, तब
तो किसी की भी पूजा व्यर्थ है।

Telegram : SHREYAS.

Phones : दुकान : २३५
६३५
निवास : १११

मेसर्स श्रेणीककुमार चंद्रकांत

अनाज, गुड़, चांवल, दाल आदि के कमीशन एजेन्ट

सुरेन्द्रनगर (गुजरात–W. Rly.)